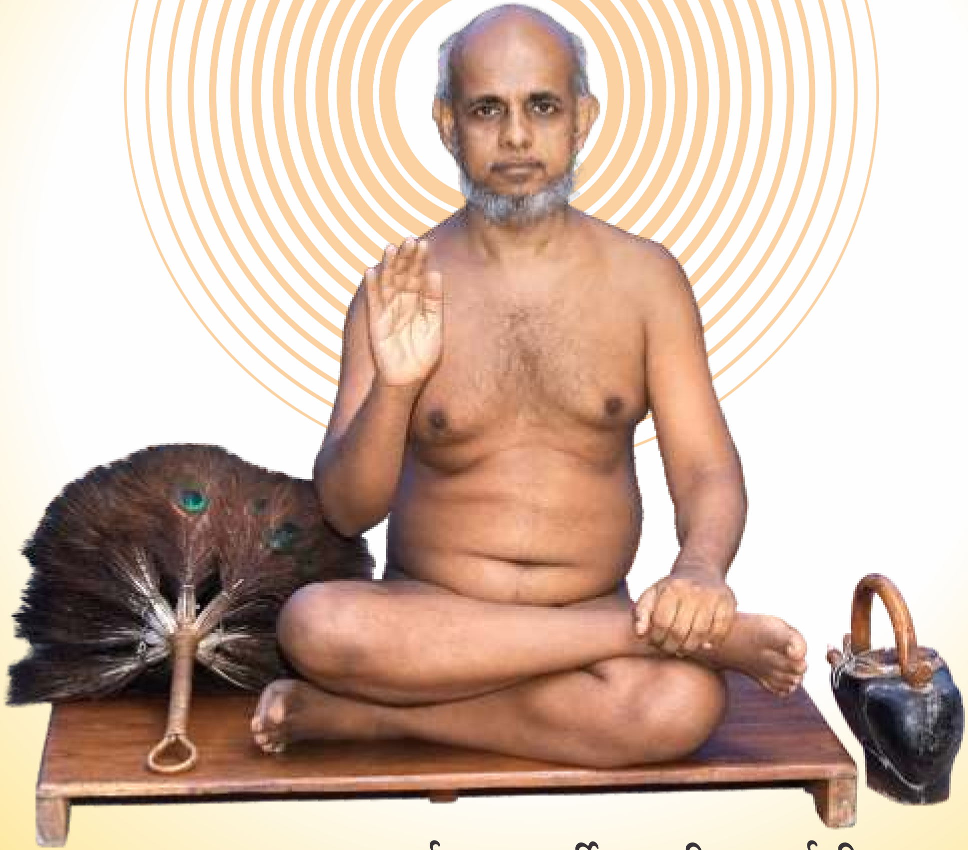

परम पूज्य तपश्चर्या–चक्रवर्ती पट्टाधीशाचार्यश्री

सुविधिसागर जी महाराज

के

50 वें जन्मदिवस के पावन अवसर पर

सुविधि–परिवार के द्वारा आयोजित

जिनवाणी-महोत्सव

सहस्रग्रन्थसंग्रह

* जन्मदिवस 19–03–1971 * मुनिदीक्षा–11–05–1989 * आचार्यपद– 20–06–2004

पट्टाधीशपद– 24–12–2010 (20–06–2004 को की गई उद्घोषणा के अनुसार)

परम पूज्य आचार्यश्री सन्मतिसागर जी महाराज के द्वारा की गई उद्घोषणाः–

हमारी समाधि के पश्चात् आपको इस संघ के संचालकपद पर नियुक्त करते हैं।

(अंकलीकर वाणी–जुलाई 2004) (अक्षयज्योति–अक्तूबर 2004)

विशद अर्हत्-महिमा विधान

कृतिकार

परम पूज्य आचार्यश्री विशदसागर जी महाराज

प्राप्तिस्थान

विशद साहित्य केन्द्र

श्री दिगम्बर जैन मन्दिर, कुआँ वाला, जैनपुरी रेवाड़ी (हरियाणा)

(परम्परानायक)

परम पूज्य चारित्र–चक्रवर्ती,
आचार्यश्री आदिसागर जी महाराज
(अंकलीकर)

(द्वितीय पट्टाधीश)

परम पूज्य तीर्थभक्त–शिरोमणि,
आचार्यश्री महावीरकीर्ति जी महाराज

(तृतीय पट्टाधीश)

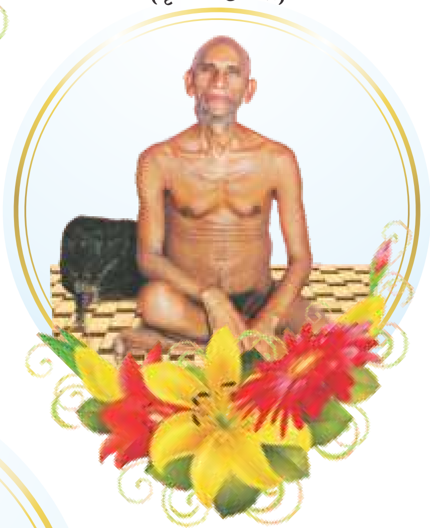

परम पूज्य सिद्धान्त–चक्रवर्ती,
आचार्यश्री सन्मतिसागर जी महाराज

(चतुर्थ पट्टाधीश)

परम पूज्य तपश्चर्या–चक्रवर्ती, आचार्यश्री सुविधिसागर जी महाराज

दिगम्बर साधु निरन्तर पगविहार करते रहते हैं। ग्रन्थभण्डार को साथ में रख कर विहार करना अशक्यप्राय: होता है। फलत: उनको ग्रन्थों के सन्दर्भ देखने में असुविधा होती है। उनकी सुविधा के लिये इस कोश का निर्माण किया गया है। इस कोश के निर्माण में किसी भी प्रकार का व्यापारिक हेतु नहीं है।

आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न श्रावकबन्धुओं से निवेदन है कि वे ग्रन्थ का विक्रय कर अध्ययन करने की परम्परा को कायम रखें।

मुखपृष्ठ पर हमने ग्रन्थकर्त्ता, अनुवादक, सम्पादक, प्रकाशक आदि के नाम दिये हैं। किसी संस्थान का कर्तुत्व हमने लुप्त नहीं किया है।

इस कोश के लिये आवश्यक ग्रन्थ हमें अनेक स्रोतों से प्राप्त हुये हैं। हम उन सभी का आभार मानते हैं।

सुविधि–परिवार

।। श्री अनन्त सिद्धेभ्यो नमः ।।

विशद
अर्हत्-महिमा विधान

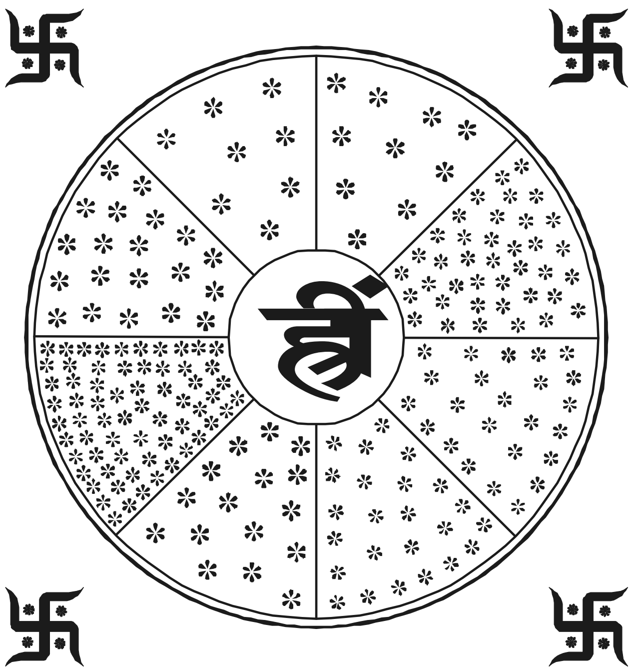

मध्य में	-	ह्रीं	पंचम वलय	-	10
प्रथम वलय	-	16	षष्ठम् वलय	-	39
द्वितीय वलय	-	64	सप्तम वलय	-	24
तृतीय वलय	-	20	अष्टम् वलय	-	24
चतुर्थ वलय	-	8	कुल अर्घ्य	-	205

aM{`Vm - प.पू. आचार्य श्री 108 विशदसागरजी महाराज

कृति - **विशद अर्हत् महिमा विधान**

कृतिकार - प.पू. साहित्य रत्नाकर, क्षमामूर्ति, पंचकल्याणक प्रभावक
आचार्य श्री 108 विशदसागरजी महाराज

संस्करण - प्रथम-2013 ● प्रतियाँ :1000

संकलन - मुनि श्री 108 विशालसागरजी महाराज

सहयोग - क्षुल्लक श्री विसोमसागरजी

संपादन - ब्र. ज्योति दीदी (9829076085) आस्था दीदी, सपना दीदी

संयोजन - ब्र. सोनी दीदी, ब्र. किरण दीदी, आरती दीदी, उमा दीदी ● मो. 9829127533

प्राप्ति स्थल -
1 जैन सरोवर समिति, निर्मलकुमार गोधा,
2142, निर्मल निकुंज, रेडियो मार्केट, नेहरू बाजार
मनिहारों का रास्ता, जयपुर
फोन : 0141-2319907 (घर) मो.: 9414812008

2. श्री राजेशकुमार जैन (ठेकेदार)
ए-107, बुध विहार, अलवर मो.: 09414016566

3. विशद साहित्य केन्द्र
C/o श्री दिगम्बर जैन मंदिर, कुआँ वाला जैनपुरी
रेवाड़ी (हरियाणा ● मो.: 09416882301)

4. लाल मंदिर, चाँदनी चौक, दिल्ली

5. जय अरिहन्त ट्रेडर्स (हरीश जैन)
6561, नेहरू गली, गाँधी नगर, दिल्ली, मो. 9818115971

मूल्य - 51/- रु. मात्र

-: अर्थ सौजन्य : -

श्री दिनेश जैन ध.प. श्रीमती सुनीता जैन

11/42, मालवीय नगर, जयपुर (राज.)

मुद्रक : राजू ग्राफिक आर्ट (संदीप शाह), जयपुर ● फोन : 2313339, 2363339 मो.: 9829050791

स्तवन

दोहा- दोष अठारह से रहित, घाती कर्म विहीन।
शत इन्द्रों से पूज्य हैं, निज स्वभाव में लीन।।

(शम्भू छंद)

प्रथम देव अर्हन्त पूजते, सर्व जगत मंगलकारी।
सिद्ध दशा को पाने वाले, परम सिद्ध हैं शिवकारी।।
अर्हत् कल्पतरू कहलाए, इच्छित फल के दाता हैं।
भवि जीवों को अभय प्रदायक, अनुपम भाग्य विधाता हैं।।1।।
अर्हत् हुए अनन्त भूत में, आगे होते जाएँगे।
अर्हत् केवलज्ञानी आगे, सिद्ध परम पद पाएँगे।।
तीर्थंकर सामान्य केवली, उपसर्ग मूक केवली गाये।
समुद्घात केवलज्ञानी अरु, अन्तःकृत भी कहलाए।।2।।
कर्मोदय से यदि किसी के, रोग भयंकर भारी हो।
तन-मन रहता हो अशांत या, अन्य कोई बीमारी हो।।
विघ्न कोई आ जाते हों या, कोई असाता आ जावे।
भक्ती पूजा करने वाला, निश्चित ही साता पावे।।3।।
अर्हत् महिमा इस विधान का, श्रवण पठन शुभकारी है।
भव-भव के जो लगे कर्म वह, कर्म प्रणासनकारी है।।
सारे जग का वैभव पाकर, इन्द्रादी पदवी पाते।
अचरज क्या जिन की पूजा से, अर्हत् ही नर बन जाते।।4।।
इस विधान की महिमा कोई, शब्दों में ना कह पावे।
अल्पमति नर की क्या शक्ति, बृहस्पति भी रह जावे।।
पूजा करने से भक्तों के, कर्म शमन हो जाते हैं।
भव्य जीव जिन की अर्चा कर, मोक्ष महाफल पाते हैं।।5।।

दोहा- 'विशद' भाव से भव्य जो, यह विधान इक बार।
करे कराए जिन चरण, पावे शांति अपार।।

।। इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।।

श्री अर्हन्त परमेष्ठी पूजा

(स्थापना)

अरहंतों के चरण कमल में, सविनय शीश झुकाते हैं।
भूत भविष्यत् वर्तमान के, अर्हत् के गुण गाते हैं।।
समवशरण में जिनके दर्शन, भवि जीवों को मिल पाते।
तीन लोक में पूज्य जिनेश्वर, तीर्थंकर वह कहलाते।।

दोहा- गुण पाए जो आपने, तीर्थंकर भगवान।
वह गुण पाने के लिए, करते हम आह्वान।।

ॐ ह्रीं श्री अर्हत् परमेष्ठी समूह ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम् सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(चौबोला छंद)

निज आतम के शुभ करण्ड में, गुण का शुभ भण्डार भरा।
नीर चढ़ाते हम श्रद्धा का, नशे मृत्यु अब जन्म जरा।।
तीर्थंकर जिनवर उपकारी, शिवपद राह दिखाते हैं।
वीतराग अरहंत अवस्था, पाने शीश झुकाते हैं।।1।।

ॐ ह्रीं श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

दिव्य ध्वनि खिरते यूँ लगता, केसर वृष्टी हुई अहा।
शीतल हृदय हुआ भक्तों का, मेरा मन भी हरष रहा।।
तीर्थंकर जिनवर उपकारी, शिवपद राह दिखाते हैं।
वीतराग अरहंत अवस्था, पाने शीश झुकाते हैं।।2।।

ॐ ह्रीं श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

लौकिक तत्त्वों में यह दुनिया, मौलिक समय बिताती है।
जिन भक्तों को दर्शन करके, अक्षय की सुधि आती है।।
तीर्थंकर जिनवर उपकारी, शिवपद राह दिखाते हैं।
वीतराग अरहंत अवस्था, पाने शीश झुकाते हैं।।3।।

ॐ ह्रीं श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

चेतन की बगिया में जिनके, आत्म ब्रह्म जब जाग गया।
कामबली उनसे डरकर के, पीठ दिखाकर भाग गया।।
तीर्थंकर जिनवर उपकारी, शिवपद राह दिखाते हैं।
वीतराग अरहंत अवस्था, पाने शीश झुकाते हैं।।4।।

ॐ ह्रीं श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

निराहार वैदेही स्वामी, निराहार निज धाम कहे।
गुणानन्त रस पीने वाले, प्रभू आप निष्काम रहे।।
तीर्थंकर जिनवर उपकारी, शिवपद राह दिखाते हैं।
वीतराग अरहंत अवस्था, पाने शीश झुकाते हैं।।5।।

ॐ ह्रीं श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सप्त भंग के सप्त सितारे, तीनों लोक प्रकाश करें।
स्याद्वाद की जले आरती, मोह महातम नाश करें।।
तीर्थंकर जिनवर उपकारी, शिवपद राह दिखाते हैं।
वीतराग अरहंत अवस्था, पाने शीश झुकाते हैं।।6।।

ॐ ह्रीं श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्ट कर्म दुख देते हमको, अरु नोकर्म सताते हैं।
मिथ्या भ्रम में भटके अब तक, आतम सुधि न पाते हैं।।
तीर्थंकर जिनवर उपकारी, शिवपद राह दिखाते हैं।
वीतराग अरहंत अवस्था, पाने शीश झुकाते हैं।।7।।

ॐ ह्रीं श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मों के फल पाकर जग में, भव-भव में अकुलाए हैं।
शिवफल की हम लिए कामना, द्वार आपके आए हैं।।
तीर्थंकर जिनवर उपकारी, शिवपद राह दिखाते हैं।
वीतराग अरहंत अवस्था, पाने शीश झुकाते हैं।।8।।

ॐ ह्रीं श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

नहीं कामना है वैभव की, पद अनर्घ पाने आए।
जलफलादि वसु द्रव्य सुलेकर, अर्घ्य चढ़ाने को लाए।।

विशद अर्हत् महिमा विधान

तीर्थंकर जिनवर उपकारी, शिवपद राह दिखाते हैं।
वीतराग अरहंत अवस्था, पाने शीश झुकाते हैं।।9।।

ॐ ह्रीं श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा– अर्हत् जिनके हैं विशद, गुणानन्त गंभीर।
जलधारा देते यहाँ, पाने भव का तीर।। शान्तये शांतिधारा

दोहा– हम दोषों की खान हैं, तुम हो दोष विहीन।
पुष्पाञ्जलि करते यहाँ, करो दोष से हीन।। दिव्य पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

जयमाला

दोहा– नाश किया प्रभु आपने, अपना कर्म कराल।
अर्हत् जिन की हम यहाँ, गाते हैं जयमाल।।

(रेखता छंद)

कहाए परम अकर्ता नाथ, अपरिमित अक्षय वैभववान।
शुभाशुभ की जड़ता कर दूर, जगाया अनुपम केवलज्ञान।।
विधाता शिवपथ के तुम एक, किए निज सत्ता की पहिचान।
प्राप्त कर अनुपम ज्ञान प्रकाश, किया तुमने चेतन का ध्यान।।
घोर तम छाया चारों ओर, लोक में फैल रहा अज्ञान।
मोह का फैल रहा है जाल, जीव है अपने से अञ्जान।।
नहीं देखा निज शास्वत देव, जमाया मिथ्या ने अधिकार।
भ्रमाया चतुर्गति हर बार, कर्म ने जग में बारम्बार।।
भ्रमण कर काल अनन्त निगोद, नहीं पाया है भव का अन्त।
पड़ी जड़ कर्मों की जंजीर, व्यर्थ ही बीते कई बसन्त।।
सहे नरकों के दुःख अपार, कथन करना है कठिन महान।
जानते सहने वाले जीव, या जाने ज्ञानी जिन भगवान।।
पशु गति में बंध बंधन आदि, घने दुःख सहते रहे त्रिकाल।
विकलत्रय बनकर पाये दुःख, कृमि आदिक बनकर हर हाल।।
गर्भ में उल्टे मल के बीच, रहे नर गति में भी नौ मास।
जवानी में भोगे कई भोग, बुढ़ापे में हो गये उदास।।

स्वर्ग के सुख में हो मदमस्त, बिताया भोगों में बहु काल।
माह छह आयु रहते शेष, सोचकर हुए बहुत बेहाल।।
दशा चारों गति की दयनीय, दिखाई देती है हे नाथ।
परिश्रम किया बहुत हर बार, लगा न फिर भी कुछ मम हाथ।।
अपरिमित अक्षय वैभव कोष, सुलभ है सबको जो अविराम।
सुलभ ना कर पाए हम नाथ, रहा सम्मोहन का परिणाम।।
बिताया काल अनादि अनन्त, मोहतम छाया चारों ओर।
उदित न हुआ ज्ञान रवि नाथ !, हुई न चिर निद्रा की भोर।।
नहीं देखा निज का स्वरूप, क्षम्य हो कैसे मेरी भूल।
विधाता तुम शिव पथ के ईश, करो मुझको भी अब अनुकूल।।
जगे मम सुस्थिर उर श्रद्धान, उदित हो प्रज्ञा प्रखर प्रकाश।
विशद हो चिर समाधि में लीन, शीघ्र हो अब विभाव का ह्रास।।
आपका चित् प्रकाश कैवल्य, प्रकाशित करता लोकालोक।
योग अवरुद्ध हुआ योगीश, रहा न अन्तर्मन में शोक।।
जीव कारण परमात्म त्रिकाल, सकल चैतन्य रूप अविकार।
रहे प्रभु गुण अनंत के कोष, नहीं है जिनका पारावार।।
धवल है अन्तस् तत्त्व अखण्ड रहे चिद् ब्रह्म निमग्न विलास।
अतीन्द्रिय सौख्य चिरन्तन भोग, प्राप्त हो स्थिर शिवपुर वास।।
प्रभो ! अब शिवपुर शैय्या बीच, त्वरित हो मेरा प्रथम प्रभात।
घुमड़ते शुभानन्द के मेघ, 'विशद' हो शांती की बरसात।।

दोहा– समवशरण के अधिपति, शुद्धातम परिशुद्ध।
अन्तर कालुष दूर हो, हों परिणाम विशुद्ध।।

ॐ ह्रीं श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा– अक्षय अनुपम ज्ञान की, प्रतिपल उठे तरंग।
शास्वत सत्ता प्राप्त हो, जागे सुथिर उमंग।।

।। इत्याशीर्वादः दिव्य पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ।।

श्री सोलहकारण समुच्चय पूजा

स्थापना

नामकर्म का भेद कहा है, तीर्थंकर प्रकृति शुभकार।
सोलहकारण भव्य भावना, भाने से होती मनहार।।
तीर्थंकर जिन धर्म तीर्थ के, रहे प्रवर्तक मंगलकार।
आह्वानन् करते हम उर में, भव्य भावना बारम्बार।।

दोहा– भाते हैं हम भावना, पाने पद तीर्थेश।
जिन गुण गाते भाव से, आकर यहाँ विशेष।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणभावना समूह ! अत्र अवतर–अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणभावना समूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणभावना समूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

(शम्भू छंद)

झर–झर नीर बरसता नभ से, जग की प्यास बुझाता है।
चेतन की जो प्यास बुझाए, वह अर्हत् पद पाता है।।
सोलहकारण विशद भावना, आज यहाँ हम भाते हैं।
तीर्थंकर पद प्राप्त हमें हो, सादर शीश झुकाते हैं।।1।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणभावना जिनगुणसंपद्भ्यो जन्म–जरा–मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

दाह मिटाने को शरीर की, चन्दन बहुत लगाये हैं।
भव संताप मिटे अब मेरा, नाथ शरण में आए हैं।।
सोलहकारण विशद भावना, आज यहाँ हम भाते हैं।
तीर्थंकर पद प्राप्त हमें हो, सादर शीश झुकाते हैं।।2।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणभावना जिनगुणसंपद्भ्यो संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

चर्म चक्षु से जो भी दिखता, वह तो क्षय के योग्य रहा।
ज्ञान चक्षु में जो कुछ आया, वह अक्षय पद सिद्ध कहा।।
सोलहकारण विशद भावना, आज यहाँ हम भाते हैं।
तीर्थंकर पद प्राप्त हमें हो, सादर शीश झुकाते हैं।।3।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणभावना जिनगुणसंपद्भ्यो अक्षयपद प्राप्ताय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्प सुगन्धित मुरझा जाते, गंध भी ना रह पाती है।
आत्म ब्रह्म की याद हमेशा, हे जिन ! सतत् सताती है।।
सोलहकारण विशद भावना, आज यहाँ हम भाते हैं।
तीर्थंकर पद प्राप्त हमें हो, सादर शीश झुकाते हैं।।4।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणभावना जिनगुणसंपद्भ्यो कामबाण विध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

पर द्रव्यों से भूख मिटी ना, क्षुधा रोग घेरा डाले।
निज अनुभव के चरू चढ़ाते, मुक्ती जो देने वाले।।
सोलहकारण विशद भावना, आज यहाँ हम भाते हैं।
तीर्थंकर पद प्राप्त हमें हो, सादर शीश झुकाते हैं।।5।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणभावना जिनगुणसंपद्भ्यो क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मोह महातम नाश हेतु यह, दीपक श्रेष्ठ जलाए हैं।
अन्तर घट में हो प्रकाश, हम विशद भावना भाए हैं
सोलहकारण विशद भावना, आज यहाँ हम भाते हैं।
तीर्थंकर पद प्राप्त हमें हो, सादर शीश झुकाते हैं।।6।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणभावना जिनगुणसंपद्भ्यो मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्ट कर्म के नाश हेतु हम, चिन्मय धूप जलाते हैं।
नित्य निरञ्जन पद पाने को, तव पद में सिरनाते हैं।।
सोलहकारण विशद भावना, आज यहाँ हम भाते हैं।
तीर्थंकर पद प्राप्त हमें हो, सादर शीश झुकाते हैं।।7।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणभावना जिनगुणसंपद्भ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

दुष्कर्मों के फल पाकर हम, चतुर्गति में भरमाए।
मोक्ष महाफल पाने को अब, श्री जिनेन्द्र पद में आए।।
सोलहकारण विशद भावना, आज यहाँ हम भाते हैं।
तीर्थंकर पद प्राप्त हमें हो, सादर शीश झुकाते हैं।।8।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणभावना जिनगुणसंपद्भ्यो मोक्षफलप्राप्ताय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

नाथ आपके दर्श बिना हम, निज दर्शन ना पाए हैं।
सिद्ध शिला पर आसन पाने, अर्घ्य बनाकर लाए हैं।।
सोलहकारण विशद भावना, आज यहाँ हम भाते हैं।
तीर्थंकर पद प्राप्त हमें हो, सादर शीश झुकाते हैं।।9।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणभावना जिनगुणसंपद्भ्यो अनर्घपदप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा– तीर्थंकर पद प्राप्त हो, सोलहकारण भाय।
शांतीधारा दे रहे, भाव सहित हर्षाय।। *(शांतये शांतिधारा)*
सोलह कारण भावना, तीर्थंकर पद देय।
पुष्पाञ्जलि करते यहाँ, पाने सुपद अजेय।। *(पुष्पांजलिं क्षिपेत्)*

अर्घावली

दोहा– सोलह कारण भावना, भाए सकल समाज।
तीर्थंकर पद प्राप्त कर, पावे शिवपद राज।।

इति मण्डस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

(सखी छंद)

दर्शन विशुद्धि सुखदायी, शिवपद में कारण भाई।
जो विशद भावना भाते, वे तीर्थंकर पद पाते।।1।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धि भावनायैः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नर विनय भाव के धारी, होते जग मंगलकारी।
जो विशद भावना भाते, वे तीर्थंकर पद पाते।।2।।

ॐ ह्रीं विनय भावनायैः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

है अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोगी, बनते हैं शिवपद भोगी।
जो विशद भावना भाते, वे तीर्थंकर पद पाते।।3।।

ॐ ह्रीं अभीक्ष्णज्ञानोपयोगी भावनायैः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

व्रत शील अनतिचार धारें, वे संयम रत्न सम्हारे।
जो विशद भावना भाते, वे तीर्थंकर पद पाते।।4।।

ॐ ह्रीं शीलव्रतेष्वनतिचार भावनायैः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

संवेग भाव जो पाते, भव से विरक्त हो जाते।
जो विशद भावना भाते, वे तीर्थंकर पद पाते।।5।।

ॐ ह्रीं संवेग भावनायैः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो त्याग शक्तिसः करते, वे मुक्ति वधू को वरते।
जो विशद भावना भाते, वे तीर्थंकर पद पाते।।6।।

ॐ ह्रीं शक्तिस्त्याग भावनायैः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो सुतप शक्तिसः धारें, वे कर्म शत्रु को मारें।
जो विशद भावना भाते, वे तीर्थंकर पद पाते।।7।।

ॐ ह्रीं शक्तिस्तप भावनायैः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हैं साधु समाधि के धारी, निज आतम ब्रह्म विहारी।
जो विशद भावना भाते, वे तीर्थंकर पद पाते।।8।।

ॐ ह्रीं साधुसमाधि भावनायैः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

करते जो वैय्यावृत्ती, उनकी है अलग प्रवृत्ती।
जो विशद भावना भाते, वे तीर्थंकर पद पाते।।9।।

ॐ ह्रीं वैय्यावृत्ति भावनायैः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

करते जो अर्हद् भक्ती, भव से पाते वह मुक्ती।
जो विशद भावना भाते, वे तीर्थंकर पद पाते।।10।।

ॐ ह्रीं अर्हद्भक्ति भावनायैः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आचार्य भक्ति सुखकारी, भवि जीवों को हितकारी।
जो विशद भावना भाते, वे तीर्थंकर पद पाते।।11।।

ॐ ह्रीं आचार्यभक्ति भावनायैः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बहुश्रुत भक्ती धर ज्ञानी, होते जग में कल्याणी।
जो विशद भावना भाते, वे तीर्थंकर पद पाते।।12।।

ॐ ह्रीं बहुश्रुतभक्ति भावनायैः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रवचन भक्ती के धारी, होते जिन धर्म प्रचारी।
जो विशद भावना भाते, वे तीर्थंकर पद पाते।।13।।

ॐ ह्रीं प्रवचनभक्ति भावनायैः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो आवश्यक अपरिहारी, बनते हैं शिवमगचारी।
जो विशद भावना भाते, वे तीर्थंकर पद पाते।।14।।

ॐ ह्रीं आवश्यक अपरिहारी भावनायैः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिन मार्ग प्रभावक भाई, शिव नारि वरें सुखदायी।
जो विशद भावना भाते, वे तीर्थंकर पद पाते।।15।।

ॐ ह्रीं मार्गप्रभावना भावनायैः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रवचन वत्सल जो पावें, वे केवलज्ञान जगावें।
जो विशद भावना भाते, वे तीर्थंकर पद पाते।।16।।

ॐ ह्रीं प्रवचनवत्सल भावनायैः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा– सोलह कारण भावना, भायें हम हे नाथ !।
शिवपथ के राही बनें, चरण झुकाते माथ।।

ॐ ह्रीं षोडशकारण भावनायैः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा– **तीर्थंकर पद का रहा, साधन श्रेष्ठ त्रिकाल।**
सोलहकारण भावना, की गाते जयमाल।।

(चौपाई)

काल अनादि अनन्त बताया, इसका अन्त कहीं न पाया।
लोकालोक अनन्त कहाया, जिनवाणी में ऐसा गाया।।

जीव लोक में रहते भाई, इनकी संख्या कही न जाई।
जीवादिक छह द्रव्यें जानो, सर्व लोक में इनको मानो।।
चतुर्गती में जीव भ्रमाते, कर्मोदय से सुख-दुख पाते।
मिथ्यामति के कारण जानो, भ्रमण होय ऐसा पहचानो।।
उससे प्राणी मुक्ती पावें, जैन धर्म जो भी अपनावें।
प्राणी तीर्थंकर पद पाते, भव्य भावना जो भी भाते।।
सोलह कारण इसको जानो, प्रथम श्रेष्ठ आवश्यक मानो।
दर्श विशुद्धी जो कहलावे, सम्यक् दृष्टी प्राणी पावे।।
तो भी कोई काम न आवें, इसके बिना श्रेष्ठ सब पावें।
विनय भावना दूजी जानो, शील व्रतों का पालन मानो।।
ज्ञानोपयोग अभीक्ष्ण बताया, फिर संवेग भाव उपजाया।
शक्तीसः शुभ त्याग बताया, तप धारण का भाव बनाया।।
साधु समाधि करें सद् ज्ञानी, वैय्यावृत्य भावना मानी।
अर्हद् भक्ती श्रेष्ठ बताई, है आचार्य भक्ति सुखदाई।।
आवश्यक अपरिहार्य जानिए, प्रवचन वत्सल श्रेष्ठ मानिए।
काल अनादी से कल्याणी, श्रेष्ठ भावना भाए प्राणी।।
हम भी यही भावना भाते, अपने मन में भाव बनाते।
'विशद' भावना हम ये भावें, फिर तीर्थंकर पदवीं पावें।।
अपने सारे कर्म नशाएँ, कर्म नाशकर शिवपुर जाएँ।
मुक्ती पद हम भी पा जावें, और नहीं अब जगत भ्रमावें।।

दोहा- सोलह कारण भावना, भाते योग सम्हाल।
भाव सहित हम वन्दना, करते 'विशद' त्रिकाल।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादि-षोडशकारणेभ्यः जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- शाश्वत् पद के हेतु हम, शाश्वत् सोलह भाव।
भाने को उद्धत रहें, करके कोई उपाव।।

इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

श्री अर्हत् गुण पूजा

स्थापना

आत्म साधना करने वाले, तीर्थंकर पद पाते हैं।
छियालिस मूलगुणों के धारी, सारे दोष नशाते हैं।।
कर्म घातिया के नशते ही, प्रगटाते प्रभु केवलज्ञान।
ऐसे अर्हत् जिन का उर में, करते भाव सहित आह्वान।।

ॐ ह्रीं षट्चत्वारिंशद्गुणविभूषित अर्हत् परमेष्ठी समूह ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

(त्रिभंगी छंद)

जय धर्म सरोवर, महामनोहर, भव्य भ्रमर प्रमुदितकारी।
जय जन्म जरादिक, रोग अनादिक, हे जिनेन्द्र पीड़ाहारी।।
गुण छियालिस धारी, दोष निवारी, केवलज्ञान जगाया है।
प्रभु पूज रचाने, तव गुण गाने, भक्त शरण में आया है।।1।।

ॐ ह्रीं षट्चत्वारिंशद गुणविभूषित अर्हत् परमेष्ठिभ्यो जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

भव ताप जलाए, द्वेष बढ़ाए, नाथ ! हमें शीतल कर दो।
हम चंदन लाए, चरण चढ़ाए, ताप नाथ मेरा हर लो।।
गुण छियालिस धारी, दोष निवारी, केवलज्ञान जगाया है।
प्रभु पूज रचाने, तव गुण गाने, भक्त शरण में आया है।।2।।

ॐ ह्रीं षट्चत्वारिंशद गुणविभूषित अर्हत् परमेष्ठिभ्यो संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षय पद धारी, जिन अविकारी, अक्षय पद का दान करो।
अक्षय निधि स्वामी, अन्तर्यामी, हमको हे नाथ प्रदान करो।।
गुण छियालिस धारी, दोष निवारी, केवलज्ञान जगाया है।
प्रभु पूज रचाने, तव गुण गाने, भक्त शरण में आया है।।3।।

ॐ ह्रीं षट्चत्वारिंशद गुणविभूषित अर्हत् परमेष्ठिभ्यो अक्षयपद प्राप्ताय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

जग में भटकाए, विषय सताए, भोगों ने हमें लुभाया है।
प्रभुवर शीलेश्वर, हे परमेश्वर, भक्त शरण में आया है।।
गुण छियालिस धारी, दोष निवारी, केवलज्ञान जगाया है।
प्रभु पूज रचाने, तव गुण गाने, भक्त शरण में आया है।।4।।

ॐ ह्रीं षट्चत्वारिंशद गुणविभूषित अर्हत् परमेष्ठिभ्यो कामबाण विध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

नित क्षुधा सताए, कष्ट बढ़ाए, रोग बड़ा भयकारी है।
नैवेद्य चढ़ाएँ, क्षुधा नशाएँ, मुक्ती की आश हमारी है।।
गुण छियालिस धारी, दोष निवारी, केवलज्ञान जगाया है।
प्रभु पूज रचाने, तव गुण गाने, भक्त शरण में आया है।।5।।

ॐ ह्रीं षट्चत्वारिंशद गुणविभूषित अर्हत् परमेष्ठिभ्यो क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हे आतम ज्ञानी, भेद विज्ञानी, मोह महातम के नाशी।
हम दीप जलाएँ, ज्ञान जगाएँ, बन जाएँ शिवपुर वासी।।
गुण छियालिस धारी, दोष निवारी, केवलज्ञान जगाया है।
प्रभु पूज रचाने, तव गुण गाने, भक्त शरण में आया है।।6।।

ॐ ह्रीं षट्चत्वारिंशद गुणविभूषित अर्हत् परमेष्ठिभ्यो मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मों के मारे, जग से हारे, चतुर्गती में दुख पाये।
हम धूप जलाए, कर्म नशाएँ, चरण शरणकारी हम आये।।
गुण छियालिस धारी, दोष निवारी, केवलज्ञान जगाया है।
प्रभु पूज रचाने, तव गुण गाने, भक्त शरण में आया है।।7।।

ॐ ह्रीं षट्चत्वारिंशद गुणविभूषित अर्हत् परमेष्ठिभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

जग जन हितकारी, शिवफल धारी, मोक्ष महाफल हम पाएँ।
यह जग है निष्फल, सरस लिए फल, पूजा करने हम आएँ।।
गुण छियालिस धारी, दोष निवारी, केवलज्ञान जगाया है।
प्रभु पूज रचाने, तव गुण गाने, भक्त शरण में आया है।।8।।

ॐ ह्रीं षट्चत्वारिंशद गुणविभूषित अर्हत् परमेष्ठिभ्यो मोक्षफलप्राप्ताय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल चंदन लाए, पुष्प मिलाएँ, अर्घ्य बनाया यह भाई।
वसु कर्म नशाने, शिवपद पाने, चढ़ा रहे मंगलदायी।।
गुण छियालिस धारी, दोष निवारी, केवलज्ञान जगाया है।
प्रभु पूज रचाने, तव गुण गाने, भक्त शरण में आया है।।9।।

ॐ ह्रीं षट्चत्वारिंशद गुणविभूषित अर्हत् परमेष्ठिभ्यो अनर्घपदप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा– जिनवर की महिमा अगम, कोई ना पावें पार।
शांती धारा दे यहाँ, वन्दूँ बारम्बार।। *(शांतये शांतिधारा)*

श्री अरहंत जिनेश के, गुणानन्त गंभीर।
पुष्पाञ्जलि करते यहाँ, मिटे विभव की पीर।। *(पुष्पांजलिं क्षिपेत्)*

अर्घावली

दोहा– छियालिस गुण धारी प्रभु, दोष अठारह हीन।
पुष्पाञ्जलि करते चरण, पाएँ स्वपद स्वाधीन।।

(मण्डलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

जन्म के दस अतिशय
(नरेन्द्र छंद)

प्रभु के जन्म समय से अतिशय, शुभ तन में दश सोहे।
स्वेद रहित तन जानो अनुपम, जन–जन का मन मोहे।।

सुर नर असुर इन्द्र विद्याधर, जिन प्रभु के गुण गावें।
भक्ति भाव से जो भी पूजें, वह अनुपम सुख पावें।।1।।

ॐ ह्रीं स्वेदरहित सहजातिशयधारक श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गर्भ से जन्मे हैं माता के, फिर भी निर्मल गाये।
मल–मूत्रादिक रहित देह प्रभु, अतिशय पावन पाये।।
सुर नर असुर इन्द्र विद्याधर, जिन प्रभु के गुण गावें।
भक्ति भाव से जो भी पूजें, वह अनुपम सुख पावें।।2।।

ॐ ह्रीं नीहाररहित सहजातिशयधारक श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तन का रुधिर श्वेत है अनुपम, अतिशय पावन गाया।
रुधिर लाल नहिं यह शुभ अतिशय, जन्म समय का पाया।।
सुर नर असुर इन्द्र विद्याधर, जिन प्रभु के गुण गावें।
भक्ति भाव से जो भी पूजें, वह अनुपम सुख पावें।।3।।

ॐ ह्रीं श्वेत रुधिर सहजातिशयधारक श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तन सुडोल आकार मनोहर, समचतुरस्र बताया।
जिस अवयव का माप है जितना, उतना ही मन भाया।।
सुर नर असुर इन्द्र विद्याधर, जिन प्रभु के गुण गावें।
भक्ति भाव से जो भी पूजें, वह अनुपम सुख पावें।।4।।

ॐ ह्रीं समचतुष्क संस्थान सहजातिशयधारक श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वज्र वृषभ नाराच संहनन, जिनवर तन में पाते।
गणधरादि नित हर्षित मन से, प्रभु का ध्यान लगाते।।
सुर नर असुर इन्द्र विद्याधर, जिन प्रभु के गुण गावें।
भक्ति भाव से जो भी पूजें, वह अनुपम सुख पावें।।5।।

ॐ ह्रीं वज्रवृषभनाराच संहनन सहजातिशयधारक श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्व.स्वाहा।

कामदेव का रूप लजावे, जिन प्रभु तन के आगे।
अतिशय रूप मनोहर प्रभु का, देखत में शुभ लागे।।

सुर नर असुर इन्द्र विद्याधर, जिन प्रभु के गुण गावें।
भक्ति भाव से जो भी पूजें, वह अनुपम सुख पावें।।6।।

ॐ ह्रीं अतिशयरूप सहजातिशयधारक श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परम सुगंधित तन है प्रभु का, अनुपम महिमाकारी।
अन्य सुरभि नहिं है जग में, प्रभु तन सम मनहारी।।
सुर नर असुर इन्द्र विद्याधर, जिन प्रभु के गुण गावें।
भक्ति भाव से जो भी पूजें, वह अनुपम सुख पावें।।7।।

ॐ ह्रीं सुगंधित तन सहजातिशयधारक श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

एक हजार आठ शुभ लक्षण, प्रभु के तन में सोहें।
अद्‌भुत महिमाशाली जिनवर, त्रिभुवन का मन मोहें।।
सुर नर असुर इन्द्र विद्याधर, जिन प्रभु के गुण गावें।
भक्ति भाव से जो भी पूजें, वह अनुपम सुख पावें।।8।।

ॐ ह्रीं सहस्राष्टलक्षण सहजातिशयधारक श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तुलना रहित अतुल बल प्रभु के, अतिशय तन में गाया।
इन्द्र चक्रवर्ती से अद्‌भुत, शक्ती मय बतलाया।।
सुर नर असुर इन्द्र विद्याधर, जिन प्रभु के गुण गावें।
भक्ति भाव से जो भी पूजें, वह अनुपम सुख पावें।।9।।

ॐ ह्रीं अतुल्यबल सहजातिशयधारक श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हित–मित–प्रिय वचन अमृत सम, प्रभु के होते भाई।
त्रिभुवन के प्राणी सुनते हैं, मंत्र मुग्ध सुखदायी।।
सुर नर असुर इन्द्र विद्याधर, जिन प्रभु के गुण गावें।
भक्ति भाव से जो भी पूजें, वह अनुपम सुख पावें।।10।।

ॐ ह्रीं प्रियहितवचन सहजातिशयधारक श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

10 केवलज्ञान के अतिशय (रोला छंद)

चार–चार सौ कोष, चारों दिश में गाया।
होय सुभिक्ष सुकाल, यह अतिशय प्रभु पाया।।

यह अतिशय हे नाथ !, जन–जन के मन भावे।
तव चरणाम्बुज ध्याय, प्राणी शिव सुख पावे।।11।।

ॐ ह्रीं गव्यूति शत् चतुष्टय सुभिक्षत्व घातिक्षय जातिशयधारक श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पाते केवल ज्ञान, नभ में गमन करे हैं।
देव रचावें पुष्प, तिन पर चरण धरे हैं।।
यह अतिशय हे नाथ !, जन–जन के मन भावे।
तव चरणाम्बुज ध्याय, प्राणी शिव सुख पावे।।12।।

ॐ ह्रीं आकाशगमन घातिक्षय जातिशयधारक श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जहाँ गमन प्रभु होय, प्राणी वध न होवे।
दया सिन्धु जिनदेव, जग की जड़ता खोवें।।
यह अतिशय हे नाथ !, जन–जन के मन भावे।
तव चरणाम्बुज ध्याय, प्राणी शिव सुख पावे।।13।।

ॐ ह्रीं अदयाभाव घातिक्षय जातिशय धारक श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कवलाहार विहीन, रहते हैं जिन स्वामी।
कुछ कम कोटी पूर्व, रहें यूँ अन्तर्यामी।।
यह अतिशय हे नाथ !, जन–जन के मन भावे।
तव चरणाम्बुज ध्याय, प्राणी शिव सुख पावे।।14।।

ॐ ह्रीं कवलाहार घातिक्षय जातिशय धारक श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हो उपसर्ग अभाव, अतिशय यह शुभकारी।
सुर नर पशू अजीव, कृत उपसर्ग निवारी।।
यह अतिशय हे नाथ !, जन–जन के मन भावे।
तव चरणाम्बुज ध्याय, प्राणी शिव सुख पावे।।15।।

ॐ ह्रीं उपसर्गाभाव घातिक्षय जातिशय धारक श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्व.स्वाहा।

समवशरण में देव, चउ दिश दर्शन देवें।
मुख पूरब में होय, सबका दुख हर लेवें।।

यह अतिशय हे नाथ !, जन–जन के मन भावे।
तव चरणाम्बुज ध्याय, प्राणी शिव सुख पावे।।16।।

ॐ ह्रीं चतुर्मुखदर्श घातिक्षय जातिशय धारक श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सब विद्या के एक, ईश्वर आप कहाए।
तुम्हें पूजते भव्य, ज्ञान कला प्रगटाए।।
यह अतिशय हे नाथ !, जन–जन के मन भावे।
तव चरणाम्बुज ध्याय, प्राणी शिव सुख पावे।।17।।

ॐ ह्रीं सर्व विद्येश्वरत्व घातिक्षय जातिशय धारक श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परमौदारिक देह, पुद्गलमय प्रभु पाए।
फिर भी छाया हीन, अतिशय यह प्रगटाए।।
यह अतिशय हे नाथ !, जन–जन के मन भावे।
तव चरणाम्बुज ध्याय, प्राणी शिव सुख पावे।।18।।

ॐ ह्रीं छायारहित घातिक्षय जातिशय धारक श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पलक झपकती नाहिं, न ही हो टिमकारी।
सौम्य दृष्टि नाशाग्र, लगती अतिशय प्यारी।।
यह अतिशय हे नाथ !, जन–जन के मन भावे।
तव चरणाम्बुज ध्याय, प्राणी शिव सुख पावे।।19।।

ॐ ह्रीं अक्षस्पंदरहित घातिक्षयजातिशय धारक श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नहीं बढ़ें नख केश, केवल ज्ञानी होते।
दिव्य शरीर विशेष, मन का कल्मश खोते।।
यह अतिशय हे नाथ !, जन–जन के मन भावे।
तव चरणाम्बुज ध्याय, प्राणी शिव सुख पावे।।20।।

ॐ ह्रीं समान नखकेशत्व घातिक्षय जातिशय धारक श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्व.स्वाहा।

14 देवकृत अतिशय (छन्द जोगीरासा)

भाषा है सर्वार्धमागधी, जिन अतिशय शुभकारी।
भव–भव के दुख हरने वाली, भव्यों को सुखकारी।।

अर्घ्य चढ़ाकर भक्ति भाव से, श्री जिन के गुण गाएँ।
अतिशय पुण्य बढ़ाके हम भी, रत्नत्रय निधि पाएँ।।21।।

ॐ ह्रीं सर्वार्धमागधी भाषा देवोपनीतातिशय धारक श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्व.स्वाहा।

बैर भाव सब तज देते हैं, जाति विरोधी प्राणी।
मैत्री भाव बढ़े आपस में, जिन मुद्रा कल्याणी।।
अर्घ्य चढ़ाकर भक्ति भाव से, श्री जिन के गुण गाएँ।
अतिशय पुण्य बढ़ाके हम भी, रत्नत्रय निधि पाएँ।।22।।

ॐ ह्रीं सर्वमैत्रीभाव देवोपनीतातिशय धारक श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सब ऋतु के फल फूल खिलें, एक साथ मनहारी।
कई योजन तक होवे ऐसा, अतिशय अद्भुत भारी।।
अर्घ्य चढ़ाकर भक्ति भाव से, श्री जिन के गुण गाएँ।
अतिशय पुण्य बढ़ाके हम भी, रत्नत्रय निधि पाएँ।।23।।

ॐ ह्रीं सर्वर्तुफलादि तरु परिणाम भाषा देवोपनीतातिशय धारक श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रत्नमयी पृथ्वी दर्पण तल, सम होवे शुभकारी।
प्रभु के विहरण हेतू रचना, करें देवगण सारी।।
अर्घ्य चढ़ाकर भक्ति भाव से, श्री जिन के गुण गाएँ।
अतिशय पुण्य बढ़ाके हम भी, रत्नत्रय निधि पाएँ।।24।।

ॐ ह्रीं आदर्शतल प्रतिमा रत्नमही देवोपनीतातिशय धारक श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वायुकुमार देव विक्रिया कर, शीतल पवन चलावें।
हो अनुकूल वायू विहार में, ये अतिशय प्रगटावें।।
अर्घ्य चढ़ाकर भक्ति भाव से, श्री जिन के गुण गाएँ।
अतिशय पुण्य बढ़ाके हम भी, रत्नत्रय निधि पाएँ।।25।।

ॐ ह्रीं सुगंधित विहरण मनुगत वायुत्व देवोपनीतातिशय धारक श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परमानन्द प्राप्त कर प्राणी, जिन प्रभु के गुण गाते।
भय संकट क्लेशादि रोग सब, मन में नहीं सताते।।
अर्घ्य चढ़ाकर भक्ति भाव से, श्री जिन के गुण गाएँ।
अतिशय पुण्य बढ़ाके हम भी, रत्नत्रय निधि पाएँ।।26।।

ॐ ह्रीं सर्वानंदकारक देवोपनीतातिशय धारक श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्व.स्वाहा।

सुखद वायु चलने से धूली, कंटक न रह पावें।
प्रभु विहार के समय देवगण, भूमी स्वच्छ बनावें।।
अर्घ्य चढ़ाकर भक्ति भाव से, श्री जिन के गुण गाएँ।
अतिशय पुण्य बढ़ाके हम भी, रत्नत्रय निधि पाएँ।।27।।

ॐ ह्रीं वायुकुमारोपशमित धूलि कंटकादि भाषा देवोपनीतातिशय धारक श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मेघ कुमार करें नित वृष्टी, गंधोदक की भाई।
इन्द्रराज की आज्ञा से हो, यह प्रभु की प्रभुताई।।
अर्घ्य चढ़ाकर भक्ति भाव से, श्री जिन के गुण गाएँ।
अतिशय पुण्य बढ़ाके हम भी, रत्नत्रय निधि पाएँ।।28।।

ॐ ह्रीं मेघकुमारकृत गंधोदक वृष्टि देवोपनीतातिशय धारक श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री विहार में सुरगण आके, स्वर्णिम कमल रचावें।
प्रभु विहार के समय देवगण, भूमी स्वच्छ बनावें।।
अर्घ्य चढ़ाकर भक्ति भाव से, श्री जिन के गुण गाएँ।
अतिशय पुण्य बढ़ाके हम भी, रत्नत्रय निधि पाएँ।।29।।

ॐ ह्रीं चरण कमल तलरचित स्वर्ण कमल देवोपनीतातिशय धारक श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बहु विधि धान्य सभी ऋतुओं के, फलने से झुक जाते।
देवों कृत अतिशय यह सुन्दर, सबको सुखी बनाते।।
अर्घ्य चढ़ाकर भक्ति भाव से, श्री जिन के गुण गाएँ।
अतिशय पुण्य बढ़ाके हम भी, रत्नत्रय निधि पाएँ।।30।।

ॐ ह्रीं सर्वऋतुफल देवोपनीतातिशय धारक श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शरद ऋतू सम स्वच्छ सुनिर्मल, गगन होय मनहारी।
उल्कापात धूम्र आदिक से, रहित होय शुभकारी।।
अर्घ्य चढ़ाकर भक्ति भाव से, श्री जिन के गुण गाएँ।
अतिशय पुण्य बढ़ाके हम भी, रत्नत्रय निधि पाएँ।।31।।

ॐ ह्रीं शरदकाल वन्निर्मल गगन देवोपनीतातिशय धारक श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्व.स्वाहा।

शरद मेघ सम सर्व दिशाएँ, होवें जन मनहारी।
रोगादिक पीड़ाएँ हरते, देव सभी की सारी।।
अर्घ्य चढ़ाकर भक्ति भाव से, श्री जिन के गुण गाएँ।
अतिशय पुण्य बढ़ाके हम भी, रत्नत्रय निधि पाएँ।।32।।

ॐ ह्रीं आकाशे जय-जयकार देवोपनीतातिशय धारक श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्व.स्वाहा।

चतुर्निकाय के देव शीघ्र ही, प्रभु भक्ती को आओ।
इन्द्राज्ञा से देव बुलाते, आकर प्रभु गुण गाओ।।
अर्घ्य चढ़ाकर भक्ति भाव से, श्री जिन के गुण गाएँ।
अतिशय पुण्य बढ़ाके हम भी, रत्नत्रय निधि पाएँ।।33।।

ॐ ह्रीं परापराह्वान देवोपनीतातिशय धारक श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

धर्मचक्र ले यक्ष इन्द्र शुभ, आगे-आगे जावें।
चार दिशा में दिव्य चक्र ले, मानो प्रभु गुण गावें।।
अर्घ्य चढ़ाकर भक्ति भाव से, श्री जिन के गुण गाएँ।
अतिशय पुण्य बढ़ाके हम भी, रत्नत्रय निधि पाएँ।।34।।

ॐ ह्रीं धर्मचक्रचतुष्टय भाषा देवोपनीतातिशय धारक श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्व.स्वाहा।

अनंत चतुष्टय के अर्घ्य

जिनवर अनन्त गुण पाए, प्रभु लोकालोक दर्शाए।
हम जिनवर के गुण गाएँ, पद सादर शीश झुकाएँ।।35।।

ॐ ह्रीं अनंतदर्शन गुणप्राप्त श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु ज्ञानावरणी नाशे, फिर केवल ज्ञान प्रकाशे।
हम जिनवर के गुण गाएँ, पद सादर शीश झुकाएँ।।36।।

ॐ ह्रीं अनंतज्ञान गुणप्राप्त श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु मोहकर्म के नाशी, जिनवर अनन्त सुखराशी।
हम जिनवर के गुण गाएँ, पद सादर शीश झुकाएँ।।37।।

ॐ ह्रीं अनंतसुख गुणप्राप्त श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

न अन्तराय रह पावें, प्रभु वीर्यानन्त प्रगटावें।
हम जिनवर के गुण गाएँ, पद सादर शीश झुकाएँ।।38।।

ॐ ह्रीं अनंतवीर्य गुणप्राप्त श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्ट प्रातिहार्य *(सोरठा)*

तरु अशोक सुखदाय, शोक निवारी जानिए।
प्रातिहार्य कहलाय, समवशरण की सभा में।।39।।

ॐ ह्रीं अशोकवृक्षमहाप्रातिहार्य श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ सिंहासन होय, रत्न जड़ित सुंदर दिखे।
अधर तिष्ठते सोय, उदयाचल सों छवि दिखे।।40।।

ॐ ह्रीं सिंहासनमहाप्रातिहार्य श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्पवृष्टि शुभ होय, भांति-भांति के कुसुम से।
महा भक्तिवश सोय, मिलकर करते देव गण।।41।।

ॐ ह्रीं सुरपुष्पवृष्टिमहाप्रातिहार्य श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो निर्वपामीति स्वाहा।

दिव्य ध्वनि सुखकार, सुने पाप क्षय हो भला।
पावैं सौख्य अपार, सुर नर पशु सब जगत के।।42।।

ॐ ह्रीं दिव्यध्वनिमहाप्रातिहार्य श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो निर्वपामीति स्वाहा।

चौंसठ चँवर ढुरांय, प्रभु के आगे देवगण।
भक्ति सहित गुण गाँय, अतिशय महिमा प्रकट हो।।43।।

ॐ ह्रीं चामरमहाप्रातिहार्य श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो निर्वपामीति स्वाहा।

सप्त सुभव दर्शाय, भामण्डल निज कांति से।
महा ज्योति प्रगटाय, कोटि सूर्य फीके पड़ें।।44।।

ॐ ह्रीं भामण्डलमहाप्रातिहार्य श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो निर्वपामीति स्वाहा।

देव दुंदुभि नाद, करें देव मिलकर सुखद।
करें नहीं उन्माद, समवशरण में जाय के।।45।।

ॐ ह्रीं देवदुंदुभिमहाप्रातिहार्य श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो निर्वपामीति स्वाहा।

जड़ित सुनग तिय छत्र, तीन लोक के प्रभु की।
दर्शाते सर्वत्र, महिमाशाली है कहा ।।46।।

ॐ ह्रीं छत्रत्रयमहाप्रातिहार्य श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो निर्वपामीति स्वाहा।

18 दोष (चौपाई)

केवलज्ञानी होने वाले, क्षुधा वेदना खोने वाले।
दोष अठारह के हैं नाशी, सिद्ध शिला के होते वासी ।।47।।

ॐ ह्रीं क्षुधादोष रहिताय श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तृषा दोष भी न रह पाए, जो भी केवलज्ञान जगाए।
दोष अठारह के हैं नाशी, सिद्ध शिला के होते वासी ।।48।।

ॐ ह्रीं तृषादोष रहिताय श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जन्म दोष उसका नश जाए, जो भी केवलज्ञान जगाए।
दोष अठारह के हैं नाशी, सिद्ध शिला के होते वासी ।।49।।

ॐ ह्रीं जन्मदोष रहिताय श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जरा दोष की होती हानी, बन जाते जो केवल ज्ञानी।
दोष अठारह के हैं नाशी, सिद्ध शिला के होते वासी ।।50।।

ॐ ह्रीं जरादोष रहिताय श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विस्मय दोष रहे न भाई, केवलज्ञानी के दुखदायी।
दोष अठारह के हैं नाशी, सिद्ध शिला के होते वासी ।।51।।

ॐ ह्रीं विस्मयदोष रहिताय श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अरति दोष उनके भी खोवें, केवल ज्ञानी जो भी होवें।
दोष अठारह के हैं नाशी, सिद्ध शिला के होते वासी ।।52।।

ॐ ह्रीं अरतिदोष रहिताय श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

खेद दोष के होते त्यागी, केवल ज्ञानी बहु बड़भागी।
दोष अठारह के हैं नाशी, सिद्ध शिला के होते वासी ।।53।।

ॐ ह्रीं खेददोष रहिताय श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रोग देह में कभी न आवे, जो भी केवल ज्ञान जगावे।
दोष अठारह के हैं नाशी, सिद्ध शिला के होते वासी ।।54।।

ॐ ह्रीं रोग रहिताय श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मन में शोक कभी न लाते, जो नर केवल ज्ञान जगाते।
दोष अठारह के हैं नाशी, सिद्ध शिला के होते वासी ।।55।।

ॐ ह्रीं शोकदोष रहिताय श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मद उनके कैसे रह पावे, जो भी केवल ज्ञान जगावे।
दोष अठारह के हैं नाशी, सिद्ध शिला के होते वासी ।।56।।

ॐ ह्रीं मददोष रहिताय श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मोह दोष के हैं वे नाशी, जो हैं केवलज्ञान प्रकाशी।
दोष अठारह के हैं नाशी, सिद्ध शिला के होते वासी ।।57।।

ॐ ह्रीं मोहदोष रहिताय श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भय का क्षय उनके हो जावे, केवल ज्ञान मुनि प्रगटावे।
दोष अठारह के हैं नाशी, सिद्ध शिला के होते वासी ।।58।।

ॐ ह्रीं भयदोष रहिताय श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निद्रा दोष त्यागते स्वामी, केवलज्ञानी अन्तर्यामी।
दोष अठारह के हैं नाशी, सिद्ध शिला के होते वासी ।।59।।

ॐ ह्रीं निद्रादोष रहिताय श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चिंता उनके हृदय न आवे, जो तीर्थंकर पदवी पावें।
दोष अठारह के हैं नाशी, सिद्ध शिला के होते वासी ।।60।।

ॐ ह्रीं चिंतादोष रहिताय श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वेद रहे न तन में कोई, जिनने भव से मुक्ती पाई।
दोष अठारह के हैं नाशी, सिद्ध शिला के होते वासी ।।61।।

ॐ ह्रीं स्वेददोष रहिताय श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

राग-दोष उनका नश जाए, मुनिवर केवलज्ञान जगाए।
दोष अठारह के हैं नाशी, सिद्ध शिला के होते वासी ।।62।।

ॐ ह्रीं रागदोष रहिताय श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मन में द्वेष कभी न लावें, विशद ज्ञान जो मुनि प्रगटावें।
दोष अठारह के हैं नाशी, सिद्ध शिला के होते वासी ।।63।।

ॐ ह्रीं द्वेषदोष रहिताय श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मरण दोष के होते नाशी, केवल ज्ञानी शिवपुर वासी।
दोष अठारह के हैं नाशी, सिद्ध शिला के होते वासी।।64।।

ॐ ह्रीं मरण दोष रहिताय श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

छियालिस मूलगुणों के धारी, दोष अठारह किए विनाश।
मोक्ष मार्ग के राही बनकर, सिद्ध शिला पर कीन्हें वास।।
अष्ट गुणों की सिद्धि पाने, करते तव पद में अर्चन।
अष्ट द्रव्य का अर्घ्य चढ़ाकर, करते हैं शत्-शत् वंदन।।65।।

ॐ ह्रीं चतुःषष्टि गुणसहिताय अष्टादश दोषरहिताय श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जाप-ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं अर्हं श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो नमः।

समुच्चय जयमाला

दोहा- तीर्थंकर भगवान का, करते हम गुणगान।
जयमाला गाते यहाँ, पावें पद निर्वाण।।

(शंभु छंद)

अरहंत विभो अंतर्यामी, निज का पुरुषार्थ जगाते हैं।
हे लोकवर्ति वर गुणनायक, निज का वैभव प्रगटाते हैं।।
वसुधा पर आने से पहले, सुरपति रत्न बरसाते हैं।
सोलह शुभ स्वप्न देख माता, फल यति से सुन हर्षाते हैं।।1।।
दश जन्म ज्ञान के अतिशय दश, चौदह देवों कृत गाये हैं।
वसु प्रातिहार्य गुण चार सहित, छियालीस मूलगुण पाये हैं।।
दश अतिशय पाके जन्म लिए, लोकत्रय हर्षित हो झूमें।
पाण्डुक वन में अभिषेक करें, सुरपति जिन चरणों को चूमें।।2।।
अतिशय युत रूप सुगंधित तन, अरु नाहिं पसेव निहार रहा।
प्रियहित वाणी बल उपमातर, शुभ रूधिर श्वेत आकार कहा।।
लक्षण सहस वसु तन सोहें, अरु सम चतुष्य संस्थान सही।
जिन वज्रवृषभनाराच युक्त, हैं अतिशय जन्म के पूर्ण यही।।3।।

होवे सुभिक्ष शत योजन में, मुख चार अदय उपसर्ग नहीं।
हो गगन गमन सब विद्यापति, ना अक्षस्पंद का काम कहीं।।
नखकेश नहीं बढ़ते आहार, लेते ना छाया पड़ती है।
कैवल्यज्ञान पाते अतिशय, पाके जिन ख्याती बढ़ती है।।4।।
है अर्ध मागधी भाषा शुभ, निर्मल दिश औ होवे आकाश।
शुभ कमल चरण तल रचें देव, भू चमके पुष्पफलें सब खास।।
नभ में जय घोष मंद वायू, गंधोदक की वृष्टी छाई।
निष्कंटक भू हो हर्षसृष्टि, शुभ धर्मचक्र मंगलदायी।।5।।
वर तरु अशोक अरु सिंहासन, छत्रत्रय भामण्डल सोहे।
शुभ दिव्यध्वनि सुर पुष्पवृष्टि, वर चमर दुंदुभि मन मोहे।।
प्रभु दर्श ज्ञान सुख बल अनंत, पाने वाले अंतर्यामी।
अष्टादश दोष विमुक्त कहे, जन-जन के हितकर जगनामी।।6।।
नहिं जन्म जरा अरु तृषा क्षुधा, विस्मय आरत अरु खेद नहीं।
भय रोग शोक मद मोह नहीं, निद्रा चिंता अरु स्वेद नहीं।।
हैं रागद्वेष अरु मरण हीन, अष्टादश दोष विनाश किए।
सर्वज्ञ हितंकर वीतराग, जग जन को सद् उपदेश दिए।।7।।
अंतर मन से हे नाथ ! भक्त, चरणों में भक्ती करते हैं।
निज के गुण निज में पाकर, निश्चय मुक्ती को वरते हैं।।
शत इन्द्र पूज्य हे तीर्थंकर !, जग 'विशद' आपके गुण गाएँ।
महिमा सुनकर के भक्त प्रभो, चरणों में आकर सिरनाएँ।।8।।

दोहा- कर्म शत्रु को जीतकर, हुए आप अरहंत।
वंदन करते तव चरण, पाने भव का अंत।।

ॐ ह्रीं श्री अर्हत् परमेष्ठिभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- सर्व शांति हो लोक में, आधि व्याधि हो नाश।
भव से तारो भक्त को, दो प्रभु शिवपुर वास।।

इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

समवशरण पूजा

स्थापना (दोहा)

समवशरण के सामने, मानस्तम्भ विशेष।
गंधकुटी के कमल पर, अधर रहे तीर्थेश।।
अष्ट भूमियों में सभी, श्रोता बैठें आन।
दिव्य देशना जिन प्रभु, दे करते कल्याण।।
तीर्थंकर की देशना, जग में रही महान।
हृदय कमल पर हे प्रभु ! करते हम आह्वान।।

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री चतुर्विंशति जिनेन्द्र ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

(चौबोला छंद)

राग आग में जलकर हमने, काल अनंत गँवाया है।
जन्म-मरण से छुटकारा हे, नाथ ! नहीं मिल पाया है।।
समवशरण की महिमा सुनकर, नाथ शरण में आए हैं।
शिवपद प्राप्त करें हम स्वामी, मन में भाव समाए हैं।।1।।

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री चतुर्विंशति जिनेन्द्राय जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

भवाताप ने हमें जलाया, भारी दुख हमने पाये।
भव संताप मिटाने को हम, चंदन श्रेष्ठ यहाँ लाए।।
समवशरण की महिमा सुनकर, नाथ शरण में आए हैं।
शिवपद प्राप्त करें हम स्वामी, मन में भाव समाए हैं।।2।।

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री चतुर्विंशति जिनेन्द्राय संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

इन्द्रिय के सुख पाकर के हम, सुख अखण्ड को भूल गये।
शास्वत सुख ना पाया अब तक, जन्म कई निर्मूल भये।।

समवशरण की महिमा सुनकर, नाथ शरण में आए हैं।
शिवपद प्राप्त करें हम स्वामी, मन में भाव समाए हैं।।3।।

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री चतुर्विंशति जिनेन्द्राय अक्षयपद प्राप्ताय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

पल भर भोग सुहाने लगते, किन्तू भव-भव दुखकारी।
निज गुण में क्रीड़ा करते हैं, घन अखण्ड ब्रह्मचर्य धारी।।
समवशरण की महिमा सुनकर, नाथ शरण में आए हैं।
शिवपद प्राप्त करें हम स्वामी, मन में भाव समाए हैं।।4।।

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री चतुर्विंशति जिनेन्द्राय कामबाण विध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षुधा मिटी ना भोजन करके, यह रहस्य ना जाना है।
चढ़ा रहे नैवेद्य चरण अब, निज स्वरूप को पाना है।।
समवशरण की महिमा सुनकर, नाथ शरण में आए हैं।
शिवपद प्राप्त करें हम स्वामी, मन में भाव समाए हैं।।5।।

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री चतुर्विंशति जिनेन्द्राय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रत्नत्रय का दीप जले अब, यही भावना भाते हैं।
मोह महातम के विनाश को, घृत का दीप जलाते हैं।।
समवशरण की महिमा सुनकर, नाथ शरण में आए हैं।
शिवपद प्राप्त करें हम स्वामी, मन में भाव समाए हैं।।6।।

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री चतुर्विंशति जिनेन्द्राय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्म उदय से परद्रव्यों को, हमने अपना माना है।
हो विनाश सारे कर्मों का, निज स्वरूप को पाना है।।
समवशरण की महिमा सुनकर, नाथ शरण में आए हैं।
शिवपद प्राप्त करें हम स्वामी, मन में भाव समाए हैं।।7।।

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री चतुर्विंशति जिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

पल-पल कर्म फलों का अनुभव, करके हम घबड़ाए हैं।
प्रबल पुण्य के फल से हे जिन, द्वार आपके आए हैं।।
समवशरण की महिमा सुनकर, नाथ शरण में आए हैं।
शिवपद प्राप्त करें हम स्वामी, मन में भाव समाए हैं।।8।।

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री चतुर्विंशति जिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्ताय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्घ्य अनेकों बार चढ़ाया, पद अनर्घ ना पाया है।
अब पद अनर्घ पद पाने हे जिन, तब पद शीश झुकाया है।।
समवशरण की महिमा सुनकर, नाथ शरण में आए हैं।
शिवपद प्राप्त करें हम स्वामी, मन में भाव समाए हैं।।9।।

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री चतुर्विंशति जिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- भक्ती कर जिनराज की, प्रकट होय निज धर्म।
शांतीधारा दे रहे, हों विनाश सब कर्म।। *(शांतये शांतिधारा)*

भक्ति भावना से जगे, अनुपम पुण्य प्रकाश।
पुष्पाञ्जलि करते विशद, हो शिवपुर में वास।। *(पुष्पांजलिं क्षिपेत्)*

अर्घ्यावली

दोहा- नमन मानस्तम्भ को, समवशरण के द्वार।
श्री जिनेन्द्र के पद युगल, वन्दन बारम्बार।।

वलयोपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

मानस्तम्भ के अर्घ्य (शम्भू छंद)

जब केवल ज्ञान प्रकट होता, तब देव शरण में आते हैं।
वह समवशरण रचना करते, शुभ मानस्तम्भ बनाते हैं।।

हम मानस्तम्भ में पूरब के, जिनबिम्बों को करते वन्दन।
शुभ अर्घ्य बनाकर के पावन, हम भाव सहित करते अर्चन।।1।।

ॐ ह्रीं पूर्वदिक् मानस्तम्भ स्थित चतुर्दिक जिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिन समवशरण के दक्षिण में, शुभ मानस्तम्भ बना मनहार।
जिनबिम्ब विराजे हैं जिसमें, चारों ही दिश में मंगलकार।।
हम मानस्तम्भ में पूरब के, जिनबिम्बों को करते वन्दन।
शुभ अर्घ्य बनाकर के पावन, हम भाव सहित करते अर्चन।।2।।

ॐ ह्रीं दक्षिणदिक् मानस्तम्भ स्थित चतुर्दिक जिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समवशरण के पश्चिम में शुभ, मानस्तम्भ बना मनहार।
जिनबिम्ब विराजे हैं जिसमें, चारों ही दिश में मंगलकार।।
हम मानस्तम्भ में पश्चिम के, जिनबिम्बों को करते वन्दन।
शुभ अर्घ्य बनाकर के पावन, हम भाव सहित करते अर्चन।।3।।

ॐ ह्रीं पश्चिमदिक् मानस्तम्भ स्थित चतुर्दिक जिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ समवशरण के उत्तर में शुभ, मानस्तम्भ बना मनहार।
जिनबिम्ब विराजे हैं जिसमें, चारों ही दिश में मंगलकार।।
हम मानस्तम्भ में उत्तर के, जिनबिम्बों को करते वन्दन।
शुभ अर्घ्य बनाकर के पावन, हम भाव सहित करते अर्चन।।4।।

ॐ ह्रीं उत्तरदिक् मानस्तम्भ स्थित चतुर्दिक जिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आठ भूमियों के अर्घ्य
(शम्भू छंद)

समवशरण के चतुर्दिशा में, है प्रासाद अतिशयकारी।
चैत्य भूमि पहली है जिसमें, जिसकी शोभा मनहारी।।
शोभित होते जिन मंदिर शुभ, जिन प्रतिमा मंगलकारी।
अर्चा करके बन जाएँ हम, समवशरण के अधिकारी।।1।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिश चैत्यभूमि जिनालय संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रथम भूमि के आगे वेदी, गोपुर बने हैं चारों ओर।
द्वितिय भूमी रही खातिका, करती मन को भाव विभोर।।
कमल खिले हैं जिसमें अनुपम, दिखती है जो मनहारी।
अर्चा करके बन जाएँ हम, समवशरण के अधिकारी।।2।।

ॐ ह्रीं खातिका भूमि संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लता भूमि तृतिय कहलाई, वल्ली वनयुत अपरम्पार।
पुष्प खिले हैं जिसमें अनुपम, भँवरे करते हैं गुंजार।।
शोभित होते जिन मंदिर शुभ, जिनबिम्ब रहे मंगलकारी।
अर्चा करके बन जाएँ हम, समवशरण के अधिकारी।।3।।

ॐ ह्रीं लता भूमि संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वल्ली वन के चतुर्दिशा में, परकोटा है गोपुर युक्त।
चतुर्थ भूमि उपवन है अनुपम, तरु अशोक से है संयुक्त।।
तरु के ऊपर चतुर्दिशा में, जिन प्रतिमाएँ मनहारी।
अर्चा करके बन जाएँ हम, समवशरण के अधिकारी।।4।।

ॐ ह्रीं उपवन भूमि मध्ये तरू अशोकवृक्ष परिसंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समवशरण में उपवन भूमी, दक्षिण दिश में मंगलकार।
सप्तच्छद तरुवर शोभित है, पत्र पुष्पयुत अपरम्पार।।
तरु के ऊपर चतुर्दिशा में, जिन प्रतिमाएँ मनहारी।
अर्चा करके बन जाएँ हम, समवशरण के अधिकारी।।5।।

ॐ ह्रीं उपवन भूमि मध्ये सप्तच्छद वृक्ष परिसंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समवशरण में उपवन भूमी, पश्चिम दिश में श्रेष्ठ महान।
चम्पक तरु शोभित है अनुपम, जिसका कौन करे गुणगान।।
तरु के ऊपर चतुर्दिशा में, जिन प्रतिमाएँ मनहारी।
अर्चा करके बन जाएँ हम, समवशरण के अधिकारी।।6।।

ॐ ह्रीं उपवन भूमि मध्ये चम्पक वृक्ष परिसंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समवशरण में उपवन भूमी, उत्तर वन में अतिशयकार।
आम्र वृक्ष तरुवर है अनुपम, पत्र पुष्प युत मंगलकार।।
तरु के ऊपर चतुर्दिशा में, जिन प्रतिमाएँ मनहारी।
अर्चा करके बन जाएँ हम, समवशरण के अधिकारी।।7।।

ॐ ह्रीं उपवन भूमि मध्ये आम्र वृक्ष परिसंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ध्वज भूमी पंचम है भाई, ध्वज लहराएँ चारों ओर।
दश प्रकार चिन्हों से चिह्नित, करती मन को भाव विभोर।।
आह्लादित करती है मन को, भवि जीवों के मनहारी।
अष्ट द्रव्य से पूज रहे हम, श्री जिनेन्द्र पद शुभकारी।।8।।

ॐ ह्रीं ध्वज भूमि मध्ये वृक्ष परिसंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कल्पवृक्ष भूमि षष्ठी है, जिसकी महिमा रही महान।
तरुवर है सिद्धार्थ नमेरू, जिसका कौन करे गुणगान।।
वृक्ष मूल में सिद्ध बिम्ब शुभ, शोभित होते अविकारी।
अष्ट द्रव्य से पूज रहे हम, श्री जिनेन्द्र पद शुभकारी।।9।।

ॐ ह्रीं कल्पवृक्ष भूमि सिद्धार्थ वृक्ष परिसंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कल्पवृक्ष भूमी है षष्ठी, वृक्ष रहा मंदार महान।
नाम रहा सिद्धार्थ मनोहर, जिसके बीचोंबीच प्रधान।।
वृक्ष मूल में सिद्ध बिम्ब शुभ, शोभित होते अविकारी।
अष्ट द्रव्य से पूज रहे हम, श्री जिनेन्द्र पद शुभकारी।।10।।

ॐ ह्रीं कल्पवृक्ष भूमि मंदार वृक्ष परिसंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पारिजात सिद्धार्थ वृक्ष शुभ, जिसकी महिमा अपरम्पार।
कल्पवृक्ष भूमी षष्ठी में, शोभित होते मंगलकार।।
वृक्ष मूल में सिद्ध बिम्ब शुभ, शोभित होते अविकारी।
अष्ट द्रव्य से पूज रहे हम, श्री जिनेन्द्र पद शुभकारी।।11।।

ॐ ह्रीं कल्पवृक्ष भूमि पारिजात वृक्ष परिसंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

संतानक सिद्धार्थ वृक्ष शुभ, शोभित होता मंगलकार।
कल्पवृक्ष भूमि षष्ठी में, महिमा जिसकी विस्मयकार।।
वृक्ष मूल में सिद्ध बिम्ब शुभ, शोभित होते अविकारी।
अष्ट द्रव्य से पूज रहे हम, श्री जिनेन्द्र पद शुभकारी।।12।।

ॐ ह्रीं कल्पवृक्ष भूमि संतानक वृक्ष परिसंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भवन भूमि सप्तम है बन्धु, बनी वीथिका चारों ओर।
सिद्ध बिम्ब जिसमें शोभित हैं, करते मन को भाव विभोर।।
प्रथम वीथिका में बिम्बों की, महिमा है अति मनहारी।
अष्ट द्रव्य से पूज रहे हम, श्री जिनेन्द्र पद शुभकारी।।13।।

ॐ ह्रीं भवन भूमि प्रथम वीथिका संयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व.स्वाहा।

श्रेष्ठ वीथिका से सज्जित है, भवन भूमि सप्तम भाई।
जिनबिम्बों से शोभित अनुपम, महिमा जग में सुखदायी।।
द्वितिय वीथिका में बिम्बों की, महिमा है अतिशयकारी।
अष्ट द्रव्य से पूज रहे हम, श्री जिनेन्द्र पद शुभकारी।।14।।

ॐ ह्रीं भवन भूमि द्वितीय वीथिका संयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सप्तम भूमी भवन कही है, बनी वीथिकाएँ मनहार।
सिद्ध बिम्ब हैं चतुर्दिशा में, अतिशयकारी मंगलकार।।
तृतीय वीथिका शोभित होती, समवशरण में सुखकारी।
अष्ट द्रव्य से पूज रहे हम, श्री जिनेन्द्र पद शुभकारी।।15।।

ॐ ह्रीं भवन भूमि तृतीय वीथिका संयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व.स्वाहा।

समवशरण में सप्तम भूमी, उपवन भू कहलाती है।
श्रेष्ठ वीथिकाओं में सज्जित, मंगल मानी जाती है।।
चतुर्थ वीथिका में शोभित हैं, सिद्ध बिम्ब मंगलकारी।
अष्ट द्रव्य से पूज रहे हम, श्री जिनेन्द्र पद शुभकारी।।16।।

ॐ ह्रीं भवन भूमि चतुर्थ वीथिका संयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

श्री मण्डप भूमी है अष्टम, समवशरण में रही महान।
मुनि आर्यिका देव-देवियों, नर पशु का जिसमें स्थान।।
बारह कोठे होते अनुपम, भवि जीवों के शुभकारी।
अष्ट द्रव्य से पूज रहे हम, श्री जिनेन्द्र पद शुभकारी।।17।।

ॐ ह्रीं मण्डप भूमि संयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(शम्भू छंद)

रत्नों से मंडित प्रथम पीठ, शुभ समवशरण में है पावन।
सुर धर्म चक्र ले खड़े हुए, आह्लादित करते हैं तन-मन।।
जो परम पूज्य परमेश्वर हैं, त्रिभुवन स्वामी कहलाते हैं।
हम अर्घ्य चढ़ाकर चरणों में, प्रभु सादर शीश झुकाते हैं।।18।।

ॐ ह्रीं प्रथम पीठ संयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मणि मुक्ता युक्त पीठ द्वितिय, आठों दिश में ध्वज लहराएँ।
नव निधी द्रव्य मंगल आठों, घट धूप शुभम् शोभा पाएँ।।
जो परम पूज्य परमेश्वर हैं, त्रिभुवन स्वामी कहलाते हैं।
हम अर्घ्य चढ़ाकर चरणों में, प्रभु सादर शीश झुकाते हैं।।19।।

ॐ ह्रीं द्वितीय पीठ संयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अतिशय वंदित शुभ गंध कुटी, है तृतिय पीठ पर कमलासन।
चउ अंगुल अधर श्री जिनवर, उनका चलता जग में शासन।।
जो परम पूज्य परमेश्वर हैं, त्रिभुवन स्वामी कहलाते हैं।
हम अर्घ्य चढ़ाकर चरणों में, प्रभु सादर शीश झुकाते हैं।।20।।

ॐ ह्रीं तृतीय पीठ संयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा– समवशरण चौबीस जिन, के हैं पूज्य त्रिकाल।
यहाँ समुच्चय रूप से, गाते हैं जयमाल।।

(शम्भू छंद)

पूर्व पुण्य के प्रबल योग से, तीर्थंकर पद पाते हैं।
सौ–सौ इन्द्र वन्दना करने, चरण–शरण में आते हैं।।
समवशरण की रचना करते, भक्ति भाव से अपरम्पार।
मणि रत्नों से सज्जित करते, चतुर्दिशा में बारम्बार।।1।।
ऋषभदेव के समवशरण का, बारह योजन था विस्तार।
आधा–आधा योजन घटते, वीर का एक योजन शुभकार।।
समवशरण की रचना उन्नत, चारों ओर से गोलाकार।
बीस सहस्र सीढ़ियाँ जानो, इक–इक हाथ की अपरम्पार।।2।।
चार कोट अरु पंच वेदि के, बीच वेदियाँ जानो आठ।
चारों ओर वीथियाँ पावन, गंधकुटी का अनुपम ठाठ।।
पार्श्व वीथियों में दो–दो शुभ, श्रेष्ठ वेदियाँ रही प्रधान।
सभी भूमियों के पथ होते, सुन्दर तोरण द्वार प्रधान।।3।।
द्वारों पर नव निधी धूप घट, मंगल द्रव्य रहे मनहार।
साढ़े बारह कोटि वाद्य शुभ, देवों द्वारा बजें अपार।।
प्रतिद्वार के दोनों बाजू, एक–एक नाटक शाला।
जहाँ देव कन्याएँ करती, नृत्य हृदय हरने वाला।।4।।
धूलिशाल के चतुर्दिशा में, धर्मचक्र धारी हैं चार।
मानस्तम्भ बने चारों दिश, मद हरने वाले मनहार।।
प्रथम भूमि चैत्यालय की शुभ, मंदिर चारों ओर महान।
बनी वीथिकाएँ फिर सुन्दर, जल से पूरित रहीं प्रधान।।5।।
द्वितीय कोट फिर पुष्पवाटिका, की पंक्ति शुभ रही महान।
वन भू–वृक्ष अशोक आम्र तरू, चम्पक सप्तवर्ण पहिचान।।
तृतीय कोट फिर कल्पवृक्ष भू, वेदी बनी नृत्यशाला।
भवन भूमि स्तूप मनोहर, ध्वजा पंक्तियों की माला।।6।।

रहा महोदय मण्डप अनुपम, श्रुतकेवली का व्याख्यान।
केवलज्ञान लब्धि के धारी, भी देते उपदेश महान।।
चौथा कोट शाल है सुन्दर, कल्पवासी जिसके रक्षक।
श्री मण्डप भू जिसके आगे, गंधकुटी के आगे तक।।7।।
गंधकुटी में तीन पीठिका, कमल के ऊपर सिंहासन।
तरु अशोक सिर तीन छत्र हैं, भामण्डल द्युतिमय दर्पण।।
चतुर्दिशा में जिन के दर्शन, दिव्य ध्वनि का हो उच्चार।
द्वादश सभा शोभती अनुपम, पुष्पवृष्टि हो मंगलकार।।8।।
तेरह सौ आठ कहे हैं जिनवर, अनुबद्ध केवली मंगलकार।
ग्यारह सौ ब्यासी परम ऋषि, सामान्य मुनि का नहीं है पार।।
सिद्ध यति चौबीस लाख अरु, चौंसठ हजार सौ चार कहे।
शुभ यक्ष यक्षिणी चौबीस थे जो, बनकर प्रभु के भक्त रहे।।9।।
ग्यारह हजार शत पाँच एक कम, मुनी संग में मोक्ष गये।
अष्टापद सम्मेद ऊर्जयन्त, चम्पा पावा से कर्म क्षये।।
चौदह दिन वृषभेष वीर जिन, दो दिन कीन्हें योग निरोध।
एक माह में बाइस जिनों ने, योग रोध कर पाया बोध।।10।।
ऋषभ नेमि जिन वासुपूज्य प्रभु, पद्मासन से मोक्ष गये।
अन्य सभी इक्कीस जिनेश्वर, खड्गासन से कर्म क्षये।।
चौबिस जिन के समवशरण की, रचना होवे एक समान।
समवशरण में जिन अर्चा कर, 'विशद' पाएँ हम पद निर्वाण।।11।।

दोहा– समवशरण में शोभते, जिन चौबिस तीर्थेश।
अष्ट द्रव्य का अर्घ्य हम, अर्पित करें विशेष।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थित चतुर्विंशति जिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा– स्वर्ग मोक्ष का धाम है, समवशरण मनहार।
अर्घ्य चढ़ाकर वन्दना, करते बारम्बार।।

इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

ऋद्धि पूजा

स्थापना (चौबोला छंद)

पूजनीय हैं तीन लोक में, तीन काल के तीर्थंकर।
चार ज्ञान के धारी होते, साथ में उनके मुनिगणधर।।
ज्ञान ध्यान संयम तप बल से, प्राप्त करें ऋद्धी गुणवान।
अष्ट ऋद्धियाँ कहीं श्रेष्ठतम, उनका हम करते आह्वान।।

ॐ ह्रीं ऋद्धियुत तीर्थंकर मुनीन्द्र ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

(चौबोला छंद)

राग आग ने हमें जलाया, निज गुण याद ना आए हैं।
जन्मादिक के रोग नाश हों, नीर चढ़ाने लाए हैं।।
संयम तप से तीर्थंकर जिन, श्रेष्ठ ऋद्धियाँ पाते हैं।
शिवपथ के राही बनने को, जिन पद शीश झुकाते हैं।।1।।

ॐ ह्रीं ऋद्धियुक्त तीर्थंकरेभ्यो जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

समता के जल में चन्दन घिस, यहाँ चढ़ाने लाए हैं।
भवाताप के समन हेतु हम, आज यहाँ पर आए हैं।।
संयम तप से तीर्थंकर जिन, श्रेष्ठ ऋद्धियाँ पाते हैं।
शिवपथ के राही बनने को, जिन पद शीश झुकाते हैं।।2।।

ॐ ह्रीं ऋद्धियुक्त तीर्थंकरेभ्यो संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षण भंगुर वैभव में हमने, मौलिक समय गँवाया है।
तव दर्शन करके अक्षय पद, आज समझ में आया है।।
संयम तप से तीर्थंकर जिन, श्रेष्ठ ऋद्धियाँ पाते हैं।
शिवपथ के राही बनने को, जिन पद शीश झुकाते हैं।।3।।

ॐ ह्रीं ऋद्धियुक्त तीर्थंकरेभ्यो अक्षयपद प्राप्ताय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

पाने को शुभ गंध भ्रमर कई, फूलों पर मँडराते हैं।
भव्यजीव जिन चरण कमल में, बनकर अलिगण आते हैं।।
संयम तप से तीर्थंकर जिन, श्रेष्ठ ऋद्धियाँ पाते हैं।
शिवपथ के राही बनने को, जिन पद शीश झुकाते हैं।।4।।

ॐ ह्रीं ऋद्धियुक्त तीर्थंकरेभ्यो कामबाण विध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

अज्ञानी रसना की चाहत, में कई रोग बढ़ाते हैं।
क्षुधारोग नाशक शुभ नेवज, हम यह आज चढ़ाते हैं।।
संयम तप से तीर्थंकर जिन, श्रेष्ठ ऋद्धियाँ पाते हैं।
शिवपथ के राही बनने को, जिन पद शीश झुकाते हैं।।5।।

ॐ ह्रीं ऋद्धियुक्त तीर्थंकरेभ्यो क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञान दीप उद्योत हेतु यह, घृत का दीप जलाते हैं।
मोह अंध छाया अन्तर में, वह विनाश को आते हैं।।
संयम तप से तीर्थंकर जिन, श्रेष्ठ ऋद्धियाँ पाते हैं।
शिवपथ के राही बनने को, जिन पद शीश झुकाते हैं।।6।।

ॐ ह्रीं ऋद्धियुक्त तीर्थंकरेभ्यो मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्म बन्ध करते विभाव से, नहीं आज तक जाना है।
भेद ज्ञान बिन धूप जलाकर, व्यर्थ ही समय गँवाना है।।
संयम तप से तीर्थंकर जिन, श्रेष्ठ ऋद्धियाँ पाते हैं।
शिवपथ के राही बनने को, जिन पद शीश झुकाते हैं।।7।।

ॐ ह्रीं ऋद्धियुक्त तीर्थंकरेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मों के फल में जीवन का, काल अनन्त गँवाया है।
रत्नत्रय के फल को हमने, नहीं आज तक पाया है।।
संयम तप से तीर्थंकर जिन, श्रेष्ठ ऋद्धियाँ पाते हैं।
शिवपथ के राही बनने को, जिन पद शीश झुकाते हैं।।8।।

ॐ ह्रीं ऋद्धियुक्त तीर्थंकरेभ्यो मोक्षफलप्राप्ताय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

पद अनर्घ पाने की इच्छा, से कई अर्घ्य चढ़ाए हैं।
जीवाजीव की श्रद्धा शायद, अब तक नहीं जगाए हैं।।
संयम तप से तीर्थंकर जिन, श्रेष्ठ ऋद्धियाँ पाते हैं।
शिवपथ के राही बनने को, जिन पद शीश झुकाते हैं।।9।।

ॐ ह्रीं ऋद्धियुक्त तीर्थंकरेभ्यो अनर्घपदप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा– ऋद्धि सिद्धियों से सभी, पाते हैं सुख भोग।
जलधारा देते यहाँ, पाने शिव पद योग।। *(शांतये शांतिधारा)*

भक्ती का फल मुक्ति है, कहते जिन भगवान।
पुष्पांजलि करते यहाँ, करके जिन गुणगान।। *(पुष्पांजलिं क्षिपेत्)*

अर्घ्यावली

दोहा– अष्ट ऋद्धियों के यहाँ, चढ़ा रहे हम अर्घ्य।
पुष्पाञ्जलि करते विशद, पाने सुपद अनर्घ्य।।

मण्डलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

(अडिल्ल छंद)

बुद्धि ऋद्धि के भेद अठारह भाई गाये।
पाकर के यह ऋद्धी मानव ज्ञान जगाए।।
भाव सहित चरणों हम अनुपम अर्घ्य चढ़ाते।
वीतराग जिन धर्म की हम शुभ महिमा गाते।।1।।

ॐ ह्रीं अवधि बुद्धि ऋद्धीधारक जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भेद विक्रिया ऋद्धी के शुभ ग्यारह गाये।
धारण करके ऋद्धी मुनिवर रूप बनाए।।
भाव सहित चरणों हम अनुपम अर्घ्य चढ़ाते।
वीतराग जिन धर्म की हम शुभ महिमा गाते।।2।।

ॐ ह्रीं विक्रिया बुद्धि ऋद्धीधारक जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चारण ऋद्धी के भाई नव भेद बताए।
नभ में गमन करें मुनिवर यह ऋद्धी पाए।।
भाव सहित चरणों हम अनुपम अर्घ्य चढ़ाते।
वीतराग जिन धर्म की हम शुभ महिमा गाते।।3।।

ॐ ह्रीं चारण बुद्धि ऋद्धीधारक जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तप ऋद्धी के भेद सात गाये शुभकारी।
करें निर्जरा संत सुतप के द्वारा भारी।।
भाव सहित चरणों हम अनुपम अर्घ्य चढ़ाते।
वीतराग जिन धर्म की हम शुभ महिमा गाते।।4।।

ॐ ह्रीं तप बुद्धि ऋद्धीधारक जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

औषधि ऋद्धि के आठ भेद भाई बतलाए।
मुनि तन का मलमूत्र जगत के रोग नशाए।।
भाव सहित चरणों हम अनुपम अर्घ्य चढ़ाते।
वीतराग जिन धर्म की हम शुभ महिमा गाते।।5।।

ॐ ह्रीं औषधि ऋद्धीधारक जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रस ऋद्धी के भेद बताए हैं छह भाई।
नीरस भी आहार जो करते हो सुखदायी।।
भाव सहित चरणों हम अनुपम अर्घ्य चढ़ाते।
वीतराग जिन धर्म की हम शुभ महिमा गाते।।6।।

ॐ ह्रीं रस ऋद्धीधारक जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बल ऋद्धी के भेद तीन गाये शुभकारी।
हो जाते बलवान मुनी ऋद्धी पा भारी।।
भाव सहित चरणों हम अनुपम अर्घ्य चढ़ाते।
वीतराग जिन धर्म की हम शुभ महिमा गाते।।7।।

ॐ ह्रीं बल ऋद्धीधारक जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ऋद्धी है अक्षीण महानश और महालय।
लघु भोजन स्थान में होता सब का संचय।।
भाव सहित चरणों हम अनुपम अर्घ्य चढ़ाते।
वीतराग जिन धर्म की हम शुभ महिमा गाते।।8।।

ॐ ह्रीं अक्षीण ऋद्धीधारक जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्ट ऋद्धियाँ श्रेष्ठ के चौंसठ भेद बताए।
तीर्थंकर मुनिराज सुतप बल से यह पाए।।
भाव सहित चरणों हम अनुपम अर्घ्य चढ़ाते।
वीतराग जिन धर्म की हम शुभ महिमा गाते।।9।।

ॐ ह्रीं अष्ट ऋद्धीधारक जिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा– अर्हत् पाते ऋद्धियाँ, महिमामयी महान्।
जयमाला गाते यहाँ, पाने पद निर्वाण।।

(शम्भू छंद)

जो त्याग तपस्या करते हैं, वह श्रेष्ठ ऋद्धियाँ पाते हैं।
निर्ग्रन्थ मुनी रत्नत्रय पा, जीवन को सफल बनाते हैं।।
विषयाशा के त्यागी होकर, आरम्भ परिग्रह रहित कहे।
नित ज्ञान ध्यान में लीन यति, अविकारी समतावान रहे।।
शुभ बुद्धि ऋद्धि के भेद परम, आगम में अष्टादश गाये।
बुद्धी विकास करते ऋषिगण महिमा, अनुपम जो दिखलाए।।
औषधि ऋद्धी के भेद शुभम्, तुम अष्ट श्रेष्ठ जानो भाई।
औषधि ऋद्धीधर मुनियों की, महिमा अतिशय शुभ बतलाई।।
मुनिवर के तन का मल भाई, औषधि बन जाए अपरम्पार।
ऋषियों की श्रेष्ठ साधना से, जीवों का हो जाए उद्धार।।
बल बढ़ जाए बल ऋद्धी से, मन वचन काय त्रय भेद रहे।
बल ऋद्धीधारी श्रेष्ठ मुनी, इस जग में अतिशयकार कहे।।

तप ऋद्धी के हैं भेद सात, तप करके कर्म विनाश करें।
तन में बाधा कोई आवे, उससे ऋषिवर न कभी डरें।।
छह भेद कहे रस ऋद्धी के, आहार सरस हो जाता है।
नीरस आहार करें मुनिवर, फिर भी रस गुण को पाता है।।
शुभ भेद विक्रिया ऋद्धी के, एकादश आगम में गाये।
हीनाधिक करें स्वयं तन को, यह शक्ती ऋद्धी से पाये।।
कई रूप बना सकते तन के, किन्तू ना ऐसा करते हैं।
निज आत्म साधना रत रहकर, जिनधर्म की बाधा हरते हैं।।
नौ भेद हैं चारण ऋद्धी के, जिसकी महिमा का पार नहीं।
आकाश गमन करते मुनिवर, चाहें जहाँ पहुँचे संत वहीं।।
अक्षीण महानस ऋद्धीधर, अतिशय महिमा दिखलाते हैं।
न कमी द्रव्य की हो किंचित्, ऋषिराज जहाँ पर जाते हैं।।
अक्षीण महालय ऋद्धीधर, अतिशय कुछ नये दिखाते हैं।
चक्री का कटक लघू भू में, श्री मुनिवर जी बैठाते हैं।।
शुभ ऋद्धि सिद्धियों की शक्ती, इस मुख से कहना कठिन कहा।
वे जान रहे ज्ञानी प्राणी, जिनको इनका शुभ ज्ञान रहा।।
अब भाव सहित जिन संतों के, चरणों में हम सिरनाते हैं।
संयम पाकर मुक्ती पाने, पद सादर शीश झुकाते हैं।।

दोहा– श्रेष्ठ ऋद्धियों के धनी, मुनिवर जिन अर्हन्त।
उनके चरणों भाव से, नमन अनन्तानन्त।।

ॐ ह्रीं ऋद्धियुक्त तीर्थंकरेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा– श्री अर्हत् जिन के चरण, झुका रहे हम माथ।
हमको भी अब ले चलो, मोक्ष महल में साथ।।

।। पुष्पाञ्जलि क्षिपेत् ।।

सहस्रनाम पूजा

स्थापना

तीर्थंकर जिनदेव, केवल ज्ञान के धारी।
दिव्य देशना आप, देते जग उपकारी।।
एक सहस्र वसु नाम, पाए जिन अविकारी।
आह्वानन के साथ, पद में ढोक हमारी।।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकर अष्टोत्तर सहस्रनाम समूह ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

(ज्ञानोदय छंद)

जल से तन निर्मल हो जाता, चेतन निर्मल कौन करे।
देव-शास्त्र-गुरु ऋद्धीधारी, हृदय ज्ञान से पूर्ण भरें।।
तीर्थंकर जिनदेव चरण में, सादर शीश झुकाते हैं।
सहस आठ गुण के द्वारा हम, प्रभु की महिमा गाते हैं।।1।।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकर अष्टोत्तर सहस्रनाम समूहेभ्यो जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

राग द्वेष मय परिणामों ने, भव-भव हमें सताया है।
चन्दन सम शीतल हैं हम भी, मन में भाव ना आया है।।
तीर्थंकर जिनदेव चरण में, सादर शीश झुकाते हैं।
सहस आठ गुण के द्वारा हम, प्रभु की महिमा गाते हैं।।2।।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकर अष्टोत्तर सहस्रनाम समूहेभ्यो संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

मिथ्याज्ञान कषायों के वश, क्षय को अक्षय मान रहे।
अक्षय पद बिन फिरे भटकते, भव-भव में कई कष्ट सहे।।
संयम तप से तीर्थंकर जिन, श्रेष्ठ ऋद्धियाँ पाते हैं।
शिवपथ के राही बनने को, जिन पद शीश झुकाते हैं।।3।।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकर अष्टोत्तर सहस्रनाम समूहेभ्यो अक्षयपद प्राप्ताय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

इन्द्रिय विषयों की आशा में, काम से जीव दहकते हैं।
चेतन के उपवन में अनुपम, शास्वत सुमन महकते हैं।।
तीर्थंकर जिनदेव चरण में, सादर शीश झुकाते हैं।
सहस आठ गुण के द्वारा हम, प्रभु की महिमा गाते हैं।।4।।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकर अष्टोत्तर सहस्रनाम समूहेभ्यो कामबाण विध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

भाँति-भाँति के व्यंजन खाकर, क्षुधा शांत ना हो पाए।
ज्ञानामृत से क्षुधा नाश हो, अतः आपके दर आए।।
तीर्थंकर जिनदेव चरण में, सादर शीश झुकाते हैं।
सहस आठ गुण के द्वारा हम, प्रभु की महिमा गाते हैं।।5।।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकर अष्टोत्तर सहस्रनाम समूहेभ्यो क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मोह लुटेरा छिपा हृदय में, अन्धकार फैलाता है।
जिनगृह के मालिक चेतन पर, जो अधिकार जताता है।।
तीर्थंकर जिनदेव चरण में, सादर शीश झुकाते हैं।
सहस आठ गुण के द्वारा हम, प्रभु की महिमा गाते हैं।।6।।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकर अष्टोत्तर सहस्रनाम समूहेभ्यो मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप बनाएँ हम विकार की, ध्यान अग्नि में नाश करें।
अष्ट कर्म जो लगे अनादी, वह अब पूर्ण विनाश करें।।
तीर्थंकर जिनदेव चरण में, सादर शीश झुकाते हैं।
सहस आठ गुण के द्वारा हम, प्रभु की महिमा गाते हैं।।7।।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकर अष्टोत्तर सहस्रनाम समूहेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

पाप कर्म के फल में प्राणी, उर से आहें भरते हैं।
पुण्योदय में अज्ञानी जन, खुश हो मस्ती करते हैं।।
तीर्थंकर जिनदेव चरण में, सादर शीश झुकाते हैं।
सहस आठ गुण के द्वारा हम, प्रभु की महिमा गाते हैं।।8।।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकर अष्टोत्तर सहस्रनाम समूहेभ्यो मोक्षफलप्राप्ताय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल से फल तक सभी मिलाकर, हमने अर्घ्य बनाया है।
पद अनर्घ पाने का मन में, भाव उभर कर आया है।।
तीर्थंकर जिनदेव चरण में, सादर शीश झुकाते हैं।
सहस आठ गुण के द्वारा हम, प्रभु की महिमा गाते हैं।।9।।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकर अष्टोत्तर सहस्रनाम समूहेभ्यो अनर्घपदप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा– नाथ कृपा बरसाइये, भक्त करें अरदास।
शिवपथ के राही बनें, पूरी हो मम आस।। *(शांतये शांतिधारा)*
गुण अनन्त के कोष हो, सहस्र आठ हैं नाम।
पुष्पाञ्जलिं करते 'विशद', करके चरण प्रणाम।। *(पुष्पांजलिं क्षिपेत्)*

अर्घ्यावली

दोहा– श्री जिनेन्द्र के चरण में, करते हम गुणगान।
भाव सहित करते यहाँ, पुष्पाञ्जलि प्रधान।।

मण्डलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

(शम्भू छंद)

प्रथम नाम श्रीमान् से लेकर, त्रिजगत् परमेश्वर शत् नाम।
सुर–नर इन्द्रों से जो पूजित, तिनको हम भी करें प्रणाम।।
नाम मंत्र का जाप निरन्तर, करके हम सिद्धी पाएँ।
तुम सम सिद्ध सुखों को पाकर, निज गुण में ही रम जाएँ।।1।।

ॐ ह्रीं **श्रीमदादिशतनामावलिभ्यः** अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दिव्य भाषापति आदी करके, विश्व विद्यामहेश्वर अन्त।
नाममंत्र शत् के धारी जिन, होते तीर्थंकर भगवन्त।।
अतिशय श्रद्धा भक्ति द्वारा, नाम मंत्र का जाप करें।
कर्म महातम का छाया जो, सारा वह संताप हरें।।2।।

ॐ ह्रीं **दिव्यभाषापत्यादिशतनामेभ्यः** अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'स्थविष्ठ' को आदी करके, अन्त पुराण पुरुषोत्तम नाम।
सौ नामों का जाप स्तवन, पूजा कर पाया विश्राम।।
नाम मंत्र की महिमा प्रभु के, सारे जग में अपरम्पार।
भाव सहित हम अर्घ्य चढ़ाते, वन्दन करते बारम्बार।।3।।

ॐ ह्रीं **स्थविष्ठादिशतनामेभ्यः** नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

महाशोक ध्वज आदि नाम हैं, भुवनेकपितामह अन्तिम नाम।
सुर–नर इन्द्रों से पूजित जिन, प्रभु के चरणों विशद प्रणाम।।
एक–एक शुभ नाम मंत्र यह, सर्व जहाँ में मंगलकार।
अर्घ्यं चढ़ाकर पूजा करते, इन्द्र बोलते जय–जयकार।।4।।

ॐ ह्रीं **महाशोकध्वजादिशतनामेभ्यः** अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री वृक्ष लक्षणादिक प्रभु के, नाम कहे हैं मंगलकार।
भाव सहित प्रभु नाप जाप कर, प्राणी होते भव से पार।।
विशद योग से तीर्थंकर के, ध्याते हैं हम भी यह नाम।
अष्ट द्रव्य का अर्घ्य चढ़ाकर, करते बारम्बार प्रणाम।।5।।

ॐ ह्रीं **श्रीवृक्षलक्षणादिशतनामेभ्यः** अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

महामुनि शुभ नाम आदि कर, रहा अरिञ्जय अन्तिम नाम।
भाव सहित यह नाम जाप कर, प्राणी पावें मुक्ती धाम।।
नाम जाप की महिमा जग में, कही गई है अपरम्पार।
अष्ट द्रव्य से पूजा करके, करें वन्दना बारम्बार।।6।।

ॐ ह्रीं **महामुन्यादिशतनामेभ्यः** अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रथम असंस्कृत को आदी कर, अन्त दमेश्वर तक सौ नाम।
पूज्य हुए हैं तीन लोक में, उनको बारम्बार प्रणाम।।
अष्ट द्रव्य का अर्घ्य चढ़ाकर, करते हम सम्यक् अर्चन।
तव पद पाने हेतु प्रभु हो, चरणों में शत्–शत् वन्दन।।7।।

ॐ ह्रीं **असंस्कृतसुसंस्कारादिशतनामेभ्यः** अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'वृहद्बृहस्पति' नाम आदि सौ, पाने वाले जगत महान्।
सर्व अमंगल हरने वाले, करते हैं जग का कल्याण।।

भवि जीवों के भाग्य विधाता, सर्व जहाँ में अपरम्पार।
विशद भाव से वन्दन करते, प्रभु चरणों में बारम्बार ।।8।।

ॐ ह्रीं **वृहद्बृहस्पत्यादिशतनामेभ्यः** अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु त्रिकालदर्शी आदी कर, पृथु नाम तक सौ यह नाम।
श्रेष्ठ सुसुन्दर विस्मयकारी, शोभनीक अतिशय अभिराम।।
चिन्तन मनन ध्यान कर प्राणी, कर देते कर्मों का क्षय।
सहस्रनाम में वर्णित अनुपम, इन नामों की जय-जय-जय।।9।।

ॐ ह्रीं **त्रिकालदर्श्यादिशतनामेभ्यः** अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दिग्वासादिक को आदिकर, नाम एक सौ आठ महान्।
नाम मंत्र यह जाप करे कोई, कोई करता है गुणगान।।
विशद भाव से अर्चा करके, ध्याता हूँ मैं यह शुभ नाम।
मोक्ष मार्ग पर बढ़ने हेतु, करता बारम्बार प्रणाम।।10।।

ॐ ह्रीं **दिग्वासादिअष्टोत्तरशतनामेभ्यः** अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

एक सहस्र आठ शुभ गाए, शुभकारी जिनवर के नाम।
इनको ध्याने वाला पाए, अतिशयकारी मुक्ती धाम।।
विशद भाव से अर्चा करके, ध्याता हूँ मैं यह शुभ नाम।
मोक्ष मार्ग पर बढ़ने हेतु, करता बारम्बार प्रणाम।।11।।

ॐ ह्रीं **श्रीमान् आदि सहस्राष्टनामेभ्यः** पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा- जिनवर तीनों लोक में, होते पूज्य त्रिकाल।
सहस्रनाम की गा रहे, भाव सहित जयमाल।।

चौपाई

जय-जय तीन लोक के स्वामी, त्रिभुवनपति हे अन्तर्यामी।
पूर्व भवों में पुण्य कमाया, पुण्योदय से नरभव पाया।।
तन निरोग पाकर के भाई, सुकुल प्राप्त कीन्हा सुखदायी।
तुमने उर में ज्ञान जगाया, अतिशय सम्यक् दर्शन पाया।।
भाव सहित संयम अपनाए, भव्य भावना सोलह भाए।

तीर्थंकर प्रकृति शुभ पाई, स्वर्गों के सुख भोगे भाई।।
गर्भादिक कल्याणक पाए, रत्न इन्द्र भारी बरषाए।
छह महीने पहले से भाई, देवों ने नगरी सजवाई।।
जन्म कल्याणक प्रभु जी पाये, सहस्राष्ट शुभ गुण प्रगटाए।
गुणानुरूप नाम भी पाए, सहस्र आठ संख्या में गाए।।
नाम सभी सार्थक हैं भाई, सहस्र नाम की महिमा गाई।
तीर्थंकर पदवी के धारी, नामों के होते अधिकारी।।
मंत्र सभी यह नाम कहाए, मंत्रों को श्रद्धा से गाए।
ऋद्धि-सिद्धि सौभाग्य जगाए, जो भी इनका ध्यान लगाए।।
महिमा का न पार है भाई, श्री जिनेन्द्र की है प्रभुताई।
जगत प्रकाशी जिन कहलाए, ज्ञानादर्श सुगुण प्रभु पाए।।
श्री जिनेन्द्र रत्नत्रय पाए, अनंत चतुष्टय प्रभु प्रगटाए।
धर्म चक्र शुभ प्रभु जी धारे, समवशरणयुत किए विहारे।।
समवशरण शुभ देव बनाते, श्री जिनवर की महिमा गाते।
प्राणी अतिशय पुण्य कमाते, पूजा अर्चा कर हर्षाते।।
जय-जयकार लगाते भाई, यह है जिनवर की प्रभुताई।
पुरुषोत्तम यह नाम कहाए, उनकी यह शुभ माल बनाए।।
अर्पित करते तव पद स्वामी, करते हम तव चरण नमामी।
नाथ ! प्रार्थना यही हमारी, दो आशीष हमें त्रिपुरारी।।
रत्नत्रय की निधि हम पाएँ, शिवपथ के राही बन जाएँ।
शिव स्वरूप हम भी प्रगटाएँ, शिवपुर जाकर शिवसुख पाएँ।।

दोहा- सहस्रनाम का कंठ में, धारें कंठाहार।
विशद गुणों को प्राप्त कर, पावें शिव का द्वार।।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशतितीर्थंकर अष्टोत्तर सहस्रनाम समूहेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्व.स्वाहा।

दोहा- जिन गुण के अनुपम सुमन, जग में रहे महान्।
पुष्पाञ्जलि कर पूजते, पाने पद निर्वाण।।

।। इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ।।

द्वादशांग (दिव्य ध्वनि) पूजा

स्थापना

तीर्थंकर की दिव्य देशना, द्वादशांग जिनवाणी है।
भवि जीवों को शिव दर्शायक, जन-जन की कल्याणी है।।
निज भाषा में जग के प्राणी, जिनवाणी को पाते हैं।
श्री जिनेन्द्र जिनवाणी को हम, अपने हृदय सजाते हैं।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकर जिन मुखोद्भूत सर्वभाषामय दिव्य ध्वनि ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

(चौपाई)

जन्म जरा भव-भव में पाए, इन रोगों से बहुत सताए।
माँ जिनवाणी बने सहाई, जिसने शिव की राह दिखाई।।1।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकर जिनमुखोद्भूत सर्वभाषामय दिव्य ध्वनिभ्यो जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

भवाताप से बचने आये, चन्दन यहाँ चढ़ाने लाए।
माँ जिनवाणी बने सहाई, जिसने शिव की राह दिखाई।।2।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकर जिनमुखोद्भूत सर्वभाषामय दिव्य ध्वनिभ्यो संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षत यहाँ चढ़ाने लाए, अक्षय पदवी पाने आये।
माँ जिनवाणी बने सहाई, जिसने शिव की राह दिखाई।।3।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकर जिनमुखोद्भूत सर्वभाषामय दिव्य ध्वनिभ्यो अक्षयपद प्राप्ताय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

विषयों से हम बहुत सताए, सुरभित पुष्प चढ़ाने लाये।
माँ जिनवाणी बने सहाई, जिसने शिव की राह दिखाई।।4।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकर जिनमुखोद्भूत सर्वभाषामय दिव्य ध्वनिभ्यो कामबाण विध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ नैवेद्य चढ़ाने लाये, क्षुधा रोग मेरा नश जाए।
माँ जिनवाणी बने सहाई, जिसने शिव की राह दिखाई।।5।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकर जिनमुखोद्भूत सर्वभाषामय दिव्य ध्वनिभ्यो क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

घृत का हम यह दीप जलाए, मोह तिमिर मेरा नश जाए।
माँ जिनवाणी बने सहाई, जिसने शिव की राह दिखाई।।6।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकर जिनमुखोद्भूत सर्वभाषामय दिव्य ध्वनिभ्यो मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप जलाते यह शुभकारी, कर्मों की नश जाए बिमारी।
माँ जिनवाणी बने सहाई, जिसने शिव की राह दिखाई।।7।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकर जिनमुखोद्भूत सर्वभाषामय दिव्य ध्वनिभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

सरस चढ़ाने फल यह लाए, मोक्ष महाफल पाने आए।
माँ जिनवाणी बने सहाई, जिसने शिव की राह दिखाई।।8।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकर जिनमुखोद्भूत सर्वभाषामय दिव्य ध्वनिभ्यो मोक्षफलप्राप्ताय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

पद अनर्घ हमको मिल जाए, अर्घ्य चढ़ाने को हम लाए।
माँ जिनवाणी बने सहाई, जिसने शिव की राह दिखाई।।9।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकर जिनमुखोद्भूत सर्वभाषामय दिव्य ध्वनिभ्यो अनर्घपदप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- **भव-भव की बाधा हरो, हे मेरे भगवान।**
शांती धार हम करें, पाने शिव स्थान।।

(शांतये शांतिधारा)

जिनवाणी द्वादशांग है, जग में मंगलकार।
पुष्पाञ्जलि करके यहाँ, ध्याते बारम्बार।।

(पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

अर्घ्यावली

दोहा– द्वादशांग आगम कहा, चौदह पूर्व संयुक्त।
श्रुत की अर्चा जो करे, हो जाए भव मुक्त।।
(मण्डलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

(ज्ञानोदय छंद)

शुभ आचार्य शास्त्र का वर्णन, जिसमें किया गया पावन।
पद अष्टादश सहस प्रमाणी, आचारांग हैं मन भावन।।
शिवपथ राह दिखाने वाला, कहा गया जो मंगलकार।
अर्घ्य चढ़ाकर वन्दन करते, जिसको हम भी बारम्बार।।1।।

ॐ ह्रीं अष्टादश सहस्र पद भूषित प्रथम आचारांग श्रुत ज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्व–पर समय की चर्चा अध्यन, विनय धर्म की क्रिया प्रधान।
पद छत्तीस हजार प्रमाणी, सूत्र कृतांग है आगम जान।।
शिवपथ राह दिखाने वाला, कहा गया जो मंगलकार।
अर्घ्य चढ़ाकर वन्दन करते, जिसको हम भी बारम्बार।।2।।

ॐ ह्रीं षट्त्रिंशत् सहस्र पद भूषित द्वितीय सूत्रकृतांग श्रुत ज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्रव्य तत्त्व के भेद कहे हैं, एकादिक सब ही स्थान।
पद हैं ब्यालिस सहस्त्र प्रमाणी, स्थानांग भी रहा महान्।।
शिवपथ राह दिखाने वाला, कहा गया जो मंगलकार।
अर्घ्य चढ़ाकर वन्दन करते, जिसको हम भी बारम्बार।।3।।

ॐ ह्रीं द्विचत्वारिंशत् सहस्र पद भूषित तृतीय स्थानांग श्रुत ज्ञानाय अर्घ्यं निर्व.स्वाहा।

द्रव्य क्षेत्र अरु काल अपेक्षा, भाव अपेक्षा रहा समान।
इक लख चौंसठ सहस सुपद युत, समवायांग कहे भगवान।।
शिवपथ राह दिखाने वाला, कहा गया जो मंगलकार।
अर्घ्य चढ़ाकर वन्दन करते, जिसको हम भी बारम्बार।।4।।

ॐ ह्रीं एकलक्ष चतुषष्ठि सहस्र पद भूषित चतुर्थ समवायांग श्रुत ज्ञानाय अर्घ्यं निर्व.स्वाहा।

जीव नित्य है औ अनित्य भी, साठ सहस प्रश्नोत्तर वान।
सहस अट्ठाइस सुपद लाख दो, व्याख्या प्रज्ञप्ती रहा महान्।।

शिवपथ राह दिखाने वाला, कहा गया जो मंगलकार।
अर्घ्य चढ़ाकर वन्दन करते, जिसको हम भी बारम्बार।।5।।

ॐ ह्रीं द्वय लक्ष अष्टाविंशति सहस्र पद भूषित पंचम व्याख्या प्रज्ञप्ति अंग श्रुत ज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री जिनवर की ध्वनी बताए, तीर्थंकर का धर्म कथन।
पाँच लाख छप्पन हजार पद, ज्ञातृ धर्म कथांग वन्दन।।
शिवपथ राह दिखाने वाला, कहा गया जो मंगलकार।
अर्घ्य चढ़ाकर वन्दन करते, जिसको हम भी बारम्बार।।6।।

ॐ ह्रीं पंच लक्ष षड्पंचाशत सहस्र पद भूषित ज्ञातृधर्म कथांग श्रुत ज्ञानाय अर्घ्यं निर्व.स्वाहा।

श्रावक की प्रतिमाएँ आवश्यक, का जिसमें सुन्दर वर्णन।
ग्यारह लाख सहस सत्तर पद, उपाशकाध्ययन को वन्दन।।
शिवपथ राह दिखाने वाला, कहा गया जो मंगलकार।
अर्घ्य चढ़ाकर वन्दन करते, जिसको हम भी बारम्बार।।7।।

ॐ ह्रीं एकादश लक्ष सप्तति सहस्र पद भूषित सप्तम उपासकाध्यनांग श्रुत ज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीर्थंकर के काल में मुनि दश, शिव पाने उपसर्ग सहे।
तेइस लाख अठबीस सहस पद, अन्तःकृद् दशांग कहे।।
शिवपथ राह दिखाने वाला, कहा गया जो मंगलकार।
अर्घ्य चढ़ाकर वन्दन करते, जिसको हम भी बारम्बार।।8।।

ॐ ह्रीं त्रयोविंशति लक्ष अष्टाविंशति सहस्र पद भूषित अष्टम अन्तःकृतदशांग श्रुत ज्ञानाय अर्घ्यं श्रुत ज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दश मुनिवर प्रत्येक तीर्थ में, समता धर उपसर्ग सहे।
लाख बानवे सहस चवालिस, अनुत्तरोपादिक में सुपद कहे।।
शिवपथ राह दिखाने वाला, कहा गया जो मंगलकार।
अर्घ्य चढ़ाकर वन्दन करते, जिसको हम भी बारम्बार।।9।।

ॐ ह्रीं द्वय नवति चतुः चत्वारिंशत् सहस्र पद भूषित नवम अनुत्तरोपपादिक दशांग श्रुत ज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चार कथाएँ लाभ–हानि का, किया गया जिसमें वर्णन।
लाख तिरानवे सोलह हजार पद, प्रश्न व्याकरण करे कथन।।
शिवपथ राह दिखाने वाला, कहा गया जो मंगलकार।
अर्घ्य चढ़ाकर वन्दन करते, जिसको हम भी बारम्बार।।10।।

ॐ ह्रीं त्रि नवति लक्ष षष्टदश सहस्र पद भूषित दशम व्याकरणांग श्रुत ज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीव्र मंद भावनानुसार जो, द्रव्य क्षेत्रादिक का वर्णन।
लाख चौरासी एक कोटि पद, विपाक सूत्र में किया कथन।।
शिवपथ राह दिखाने वाला, कहा गया जो मंगलकार।
अर्घ्य चढ़ाकर वन्दन करते, जिसको हम भी बारम्बार।।11।।

ॐ ह्रीं एक कोटि चतुःअशीति लक्ष पद भूषित विपाक सूत्रांग श्रुत ज्ञानाय अर्घ्यं निर्व.स्वाहा।

तीन सौ त्रेसठ मत का वर्णन, द्रव्य लोक मंत्रादि कथन।
एक सौ आठ कोढ़ि अड़सठ लख, छप्पन सहस सुपद है पन।।
दृष्टिवाद बारहवें अंग का, पंच भेद युत किया कथन।
शिवपद हमें दिखाने वाले, श्रुत पद को मेरा वन्दन।।12।।

ॐ ह्रीं अष्टाधिक शत् कोटि अष्ट षष्टि लक्ष षट्पंचाशत सहस्र पद भूषित दृष्टिवाद श्रुत ज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(चौपाई)

इन्द्र की आयु आदि बताएँ, चन्द्र प्रज्ञप्ति शास्त्र कहाए।
दृष्टिवाद का अंग ये गाते, जिसको हम शुभ अर्घ्य चढ़ाते।।13।।

ॐ ह्रीं पंचभेदसहित दृष्टिवादांग श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो प्रतीन्द्र का कथन बताए, सूर्य प्रज्ञप्ति वह कहलाएँ।
दृष्टिवाद का अंग ये गाते, जिसको हम शुभ अर्घ्य चढ़ाते।।14।।

ॐ ह्रीं पंचलक्ष त्रि सहस्र पद भूषित द्वितीय सूर्य प्रज्ञप्ति परिकर्म श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मेरु क्षेत्र आदिक बतलाए, जम्बू द्वीप प्रज्ञप्ति कहाए।
दृष्टिवाद का अंग ये गाते, जिसको हम शुभ अर्घ्य चढ़ाते।।15।।

ॐ ह्रीं त्रि लक्ष पंचविंशति सहस्र पद भूषित तृतीय जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति परिकर्म श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीप सागर की रचना गाए, द्वीप सागर प्रज्ञप्ति कहाए।
दृष्टिवाद का अंग ये गाते, जिसको हम शुभ अर्घ्य चढ़ाते।।16।।

ॐ ह्रीं द्वि पंचाशत् लक्ष षट्त्रिंशत् सहस्र पद भूषित चतुर्थ दीप सागर प्रज्ञप्ति श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भव्याभव्य आदि जो गाए, व्याख्या प्रज्ञप्ति कहलाए।
दृष्टिवाद का अंग ये गाते, जिसको हम शुभ अर्घ्य चढ़ाते।।17।।

ॐ ह्रीं चतुरशीति लक्ष षट्त्रिंशत् सहस्र पद भूषित पंचम व्याख्या प्रज्ञप्ति परिकर्म श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दूजा भेद सूत्र कहलाए, न्याय शास्त्र का ज्ञान कराए।
तीन सौ त्रेसठ मत जो गाये, आगम के पद हम सिरनाए।।18।।

ॐ ह्रीं अष्टाशीति लक्ष पदभूषित द्वितीय सूत्र अधिकार श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्व.स्वाहा।

महापुरुष की श्रेष्ठ कथाएँ, सच्चारित्र आगम से पाएँ।
प्रथमानुयोग शास्त्र ये गाते, जिसको हम भी अर्घ्य चढ़ाते।।19।।

ॐ ह्रीं पंच सहस्र पद भूषित प्रथमानुयोग श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्वगत के भेद (सखी छंद)

उत्पाद पूर्व शुभकारी, है तत्त्व प्रकाशनकारी।
जिसका है शौर्य निराला, जग का तम हरने वाला।।20।।

ॐ ह्रीं एककोटि पदभूषित प्रथम उत्पाद पूर्व श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अग्रायणीय पूरब भाई, है जीवों को सुखदायी।
जो ज्ञान रश्मि प्रगटाए, जग को सन्मार्ग दिखाए।।21।।

ॐ ह्रीं षड्नवति लक्षपद भूषित द्वितीय अग्रायणीय पूर्व श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्व.स्वाहा।

जो वीर्यानुवाद कहाए, बल वीर्य की शक्ती गाए।
है जग जीवों का त्राता, जिसमें ब्रह्माण्ड समाता।।22।।

ॐ ह्रीं सप्तति लक्षपद भूषित तृतीय वीर्यानुवाद पूर्व श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो स्व–पर चतुष्टय गाये, अस्तिनास्ति प्रवाद कहाए।
इसका जो ज्ञान जगाए, वह स्याद्वादी कहलाए।।23।।

ॐ ह्रीं षष्टि लक्षपद भूषित चतुर्थ अस्तिनास्ति प्रवाद पूर्व श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्व.स्वाहा।

है ज्ञान प्रवाद निराला, जग का तम हरने वाला।
जो जगत् प्रकाशनकारी, महिमा है जिसकी न्यारी।।24।।

ॐ ह्रीं नव नवति लक्ष नव नवति सहस्र नव शत् नव नवतिपद भूषित पंचम ज्ञान प्रवाद श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हम सत्य प्रवाद को ध्यायें, निज के सत् को प्रगटाएँ।
है सत्य सुधामृत वाणी, हित–मित–प्रिय जग कल्याणी।।25।।

ॐ ह्रीं एककोटि पदभूषित षष्टम सत्यप्रवाद पूर्व श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ आत्म प्रवाद कहाए, ज्ञानी जन के मन भाए।
जिस पर श्रद्धा धर प्राणी, सुनते हैं भवि जिनवाणी।।26।।

ॐ ह्रीं षड्विंशति कोटिपद भूषित सप्तम आत्म प्रवाद पूर्व श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्व.स्वाहा।

जो कर्म का ज्ञान कराए, वह कर्म प्रवाद कहाए।
जो संयम को अपनाए, कर्मों से मुक्ती पाए।।27।।

ॐ ह्रीं एक कोटि अशीति लक्षपद भूषित अष्टम कर्मप्रवाद पूर्व श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्व.स्वाहा।

(चौपाई)

प्रत्याख्यान प्रवाद कहाया, त्यागादिक जिसमें बतलाया।
उच्च ज्ञान जग को सिखलाए, ऊपर का शुभ मार्ग बताए।।28।।

ॐ ह्रीं चतुतशीति लक्षपद भूषित नवम प्रत्याख्यान पूर्व श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्व.स्वाहा।

विद्यानुवाद पूर्व है भाई, जिसमें विद्या है सुखदायी।
जैनागम को जो भी ध्याये, उसको शिवपद राह दिखाए।।29।।

ॐ ह्रीं एक कोटि दश लक्षपद भूषित दशम् विद्यानुवाद पूर्व श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्व.स्वाहा।

प्राणावाद पूर्व शुभकारी, भवि जीवों को मंगलकारी।
शिवपथ पर जो हमें बढ़ाए, भव्य जीव जो आगम ध्याये।।30।।

ॐ ह्रीं त्रयोदश कोटिपद भूषित द्वादशम् प्राणवाद पूर्व श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्व.स्वाहा।

क्रिया विशाल पूर्व शुभ गाया, जिसमें सद् आचार बताया।
सदाचरण की क्रिया हमारी, शिवपद दायक है मनहारी।।31।।

ॐ ह्रीं नव कोटिपद भूषित त्रयोदशम् क्रियाविशाल पूर्व श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्व.स्वाहा।

लोकबिन्दु शुभ सार कहाए, तीन लोक का वर्णन गाए।
जो भी श्रवण करें जिनवाणी, बने जीव को जो कल्याणी।।32।।

ॐ ह्रीं द्वादश कोटि पंचाशत् लक्षपद भूषित चतुर्दशम् लोकबिन्दुसार पूर्व श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ग्रह संचार आदि बतलाए, वह कल्याणवाद कहलाए।
जैनागम को मन से ध्याये, वह प्राणी ज्ञानी बन जाए।।33।।

ॐ ह्रीं षड्विंशति कोटिपद भूषित एक दशम् कल्याणवाद पूर्व श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्व.स्वाहा।

पंच चूलिका वर्णन (आल्हा छंद)

दृष्टिवाद का भेद है पञ्चम, जिसका रहा चूलिका नाम।
पाँच भेद इसके बतलाए, जिसको श्रावक करें प्रणाम।।
प्रथम भेद जलगता है जिसमें, कहा गया जल का संचार।
ऐसे जैनागम को वन्दन, करते हैं हम बारम्बार।।34।।

ॐ ह्रीं द्वय कोटि नव लक्ष एकोन अशीति सहस्र द्वयशत् पंचपदभूषित प्रथम जलगता चूलिका श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तंत्र–मंत्र के द्वारा प्राणी, स्थल में भी करें गमन।
पृथ्वी से सम्बन्धित सारे, विषयों का जो करें कथन।।
स्थलगता वास्तु सम्बन्धी, वर्णन करता है शुभकार।
ऐसे जैनागम को वन्दन, करते हैं हम बारम्बार।।35।।

ॐ ह्रीं द्वय कोटि नव लक्ष एकोन अशीति सहस्र द्वयशत् पंचपदभूषित द्वितीय थलगता चूलिका श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इन्द्रजाल माया मय क्रीड़ा, मंत्र विधी का करे कथन।
अन्य जीव के हितकर कारण, जिनका भी करता वर्णन।।
मायागता शास्त्र माया के, ज्ञान का है अनुपम आधार।
ऐसे जैनागम को वन्दन, करते हैं हम बारम्बार।।36।।

ॐ ह्रीं द्वय कोटि नव लक्ष एकोन अशीति सहस्र द्वयशत् पंचपदभूषित तृतीय मायागता चूलिका श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सिंह व्याघ्र आदिक रूपों को, मानव स्वयं करे धारण।
इस प्रकार के मंत्र तंत्र, आदिक का है जिसमें वर्णन।।
चित्र काष्ठ आदिक कर्मों का, रूपगता है शुभ आधार
ऐसे जैनागम को वन्दन, करते हैं हम बारम्बार।।37।।

ॐ ह्रीं द्रय कोटि नव लक्ष एकोन अशीति सहस्र द्रयशत् पंचपदभूषित चतुर्थ रूपगता चूलिका श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गगन गमन के साधन जिसमें, ऋद्धि-सिद्धि का है वर्णन।
सम्यक् मंत्र तपस्या आदिक, का भी जिसमें किया कथन।।
है आकाश गता में वर्णन, सब जीवों का भली प्रकार।
ऐसे जैनागम को वन्दन, करते हैं हम बारम्बार।।38।।

ॐ ह्रीं द्रय कोटि नव लक्ष एकोन अशीति सहस्र द्रयशत् पंचपदभूषित पंचम आकाशगता चूलिका श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सामायिक स्तव आदिक शुभ, कहे प्रकीर्णक चौदह नाम।
निज पर का जो भेद जगाए, देने वाली है शिव धाम।।
तीर्थंकर की दिव्य देशना, सर्व जगत् में मंगलकार।
अंग वाह्य जिनवाणी को हम, पूज रहे हैं बारम्बार।।39।।

ॐ ह्रीं सामायिक-स्तव आदिक चतुर्दश प्रकीर्णक श्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- जिनवाणी जिनदेव की, द्वादशांग शुभकार।
जो पूजें निज भाव से, हो जाएँ भवपार।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकर मुखकमल विनिर्गत गणधरदेव ग्रथित द्वादशांग बाह्यस्वरूप दिव्यध्वनिभ्यो पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा- दिव्यध्वनि जिनराज की, अनुपम रही विशाल।
विशद भाव से हम यहाँ, गाते हैं जयमाल।।

(चौबोला छंद)

दिव्य देशना श्री जिनेन्द्र की, जन-जन की कल्याणी है।
मोह महातम नाशक अनुपम, स्वपर भेद विज्ञानी है।।

वस्तु स्वरूप बताने वाली, मंगलमय अनुपम गाई।
सप्त भंग की शुभ तरंगमय, ज्योतिर्मय जो कहलाई।।
सप्त तत्त्व अरु नव पदार्थों का, वर्णन करने वाली है।
भवि जीवों के सारे संकट, क्षण में हरने वाली है।।
अनेकांत मय वाणी अनुपम, जन-जन की उपकारी है।
सर्व अमंगल हरने वाली, सर्व जगत हितकारी है।।
कर्म कालिमा नाशनकारी, अमृत रस बरसाती है।
ॐकारमय दिव्य देशना, जन-मन को हरसाती है।।
मलयगिरि चन्दन गंगाजल, इन सबसे भी शीतल है।
कण-कण पावन है इस जग का, पावन हुई महीतल है।।
स्याद्वादमय परम औषधि, भव पीड़ा को हरती है।
विषय दाह का नाश करे जो, जग में मंगल करती है।।
त्रय सन्ध्या में त्रय मुहूर्त तक, दिव्य ध्वनि खिरती पावन।
गणधर चक्री के निमित्त से, असमय में हो उच्चारण।।
अमृतमय झरने के जैसी, सबके मन को भाती है।
चिदानन्द चैतन्य स्वरूपी, मोक्ष मार्ग दिखलाती है।।
बारह श्रेष्ठ सभाएँ वाणी, सुनतीं होकर भाव विभोर।
होता है आनन्द देशना, सुनकर के शुभ चारों ओर।।
जिन वचनामृत भक्ति भाव से, श्रद्धायुत हो पीते हैं।
जन्म जरा से दूर अजर वह, अविनाशी हो जीते हैं।।
हो जयवन्त श्री जिनवाणी, सदा-सदा जिनसंत रहें।
भवि जीवों के द्वारा जग में, धर्म की सरिता श्रेष्ठ बहे।।

दोहा- दिव्य देशना में भरा, द्वादशांग भण्डार।
पूज रहे हम भाव से, भव से पाएँ पार।।

ॐ ह्रीं श्री तीर्थंकर जिनमुखोद्भूत सर्वभाषामय दिव्य ध्वनिभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्व.स्वाहा।

दोहा- श्री जिनेन्द्र की देशना, जग में रही अपार।
भवि जीवों को शीघ्र ही, कर देती भव पार।।

।। इत्याशीर्वाद पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ।।

चतुर्विंशति तीर्थंकर पूजा

स्थापना

तीर्थंकर पद पाने वाले, भरत क्षेत्र के जिन चौबीस।
जिनकी पूजा करते हैं हम, चरणों झुका रहे हैं शीश।।
तीर्थंकर जिन तीन लोक में, कहे गये हैं पुण्य निधान।
विशद हृदय में करते हैं हम, भाव सहित प्रभु का आह्वान।।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकर ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

(सखी छंद)

हमने जल बहुत पिया है, ना समरस पान किया है।
चौबीसों जिन को ध्यायें, जिनपद में शीश झुकाएँ।।1।।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

भव ताप नशाने आए, शुभ गंध चढ़ाने लाए।
चौबीसों जिन को ध्यायें, जिनपद में शीश झुकाएँ।।2।।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षत शुभ यहाँ चढ़ाएँ, अक्षय पदवी हम पाएँ।
चौबीसों जिन को ध्यायें, जिनपद में शीश झुकाएँ।।3।।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो अक्षयपद प्राप्ताय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ शील सम्पदा पाएँ, सुरभित यह पुष्प चढ़ाएँ।
चौबीसों जिन को ध्यायें, जिनपद में शीश झुकाएँ।।4।।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो कामबाण विध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

ताजे नैवेद्य चढ़ाएँ, हम क्षुधा रोग विनशाएँ।
चौबीसों जिन को ध्यायें, जिनपद में शीश झुकाएँ।।5।।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हम ज्ञान दीप प्रजलाएँ, मिथ्यातम दूर भगाएँ।
चौबीसों जिन को ध्यायें, जिनपद में शीश झुकाएँ।।6।।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

यह ताजी धूप जलाएँ, हम आठों कर्म नशाएँ।
चौबीसों जिन को ध्यायें, जिनपद में शीश झुकाएँ।।7।।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

हम मोक्ष महाफल पाएँ, फल ताजे यहाँ चढ़ाएँ।
चौबीसों जिन को ध्यायें, जिनपद में शीश झुकाएँ।।8।।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो मोक्षफलप्राप्ताय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

हम अर्घ्य चढ़ाने लाए, तुमसा बनने को आए।
चौबीसों जिन को ध्यायें, जिनपद में शीश झुकाएँ।।9।।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो अनर्घपदप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- प्रासुक निर्मल नीर की, देते हैं त्रय धार।
विश्व शांति की अर्चना, बन जाए आधार।।

(शांतये शांतिधारा)

चढ़ा रहे हम भाव से, पुष्पों का यह हार।
मुक्ती इस भव से मिले, हो जाए उद्धार।।

(पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

अर्घावली

दोहा- तीर्थंकर चौबिस हुए, जग में महति महान्।
पुष्पाञ्जलि करके यहाँ, करते हम गुणगान।।

मण्डस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

(चौपाई)

आदिनाथ सृष्टी के कर्त्ता, मुक्ति वधू के हुए जो भर्त्ता।
जिनकी महिमा यह जग गाए, पद में सादर शीश झुकाए।।1।।

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अजितनाथ ने कर्म नशाए, फिर तीर्थंकर पदवी पाए।
जिनकी महिमा यह जग गाए, पद में सादर शीश झुकाए।।2।।

ॐ ह्रीं श्री अजितनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सम्भव जिनवर हुए निराले, शिवपथ श्रेष्ठ दिखाने वाले।
जिनकी महिमा यह जग गाए, पद में सादर शीश झुकाए।।3।।

ॐ ह्रीं श्री संभवनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अभिनन्दन पद वन्दन करते, कर्म कालिमा प्राणी हरते।
जिनकी महिमा यह जग गाए, पद में सादर शीश झुकाए।।4।।

ॐ ह्रीं श्री अभिनंदननाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुमतिनाथ जी साथ निभाते, जीवों को शिवपुर पहुँचाते।
जिनकी महिमा यह जग गाए, पद में सादर शीश झुकाए।।5।।

ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पद्मप्रभु जी शिवपद दाता, जग जीवों के भाग्य विधाता।
जिनकी महिमा यह जग गाए, पद में सादर शीश झुकाए।।6।।

ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभु जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिन सुपार्श्वजी मंगलकारी, भवि जीवों के करुणाकारी।
जिनकी महिमा यह जग गाए, पद में सादर शीश झुकाए।।7।।

ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लक्षण–पग में चाँद का पाए, चन्द्रप्रभु जी जो कहलाए।
जिनकी महिमा यह जग गाए, पद में सादर शीश झुकाए।।8।।

ॐ ह्रीं श्री चन्द्रप्रभु जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुविधिनाथ जी विधि बताएँ, मुक्ती प्राणी कैसे पाएँ।
जिनकी महिमा यह जग गाए, पद में सादर शीश झुकाए।।9।।

ॐ ह्रीं श्री पुष्पदन्त जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शीतल जिन शीतल गुणधारी, शिव पाये बनके अनगारी।
जिनकी महिमा यह जग गाए, पद में सादर शीश झुकाए।।10।।

ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिन श्रेयांस के हम गुण गाते, चरणों में शुभ अर्घ्य चढ़ाते।
जिनकी महिमा यह जग गाए, पद में सादर शीश झुकाए।।11।।

ॐ ह्रीं श्री श्रेयनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वासुपूज्य जगपूज्य कहाए, चम्पापुर से मुक्ती पाए।
जिनकी महिमा यह जग गाए, पद में सादर शीश झुकाए।।12।।

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्य जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(चाल छंद)

श्री विमलनाथ जिन स्वामी, हो गये प्रभु अन्तर्यामी।
हम जिन का ध्यान लगाते, यह पावन अर्घ्य चढ़ाते।।13।।

ॐ ह्रीं श्री विमलनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हैं गुणानन्त के धारी, जिनवर अनन्त अविकारी।
हम जिन का ध्यान लगाते, यह पावन अर्घ्य चढ़ाते।।14।।

ॐ ह्रीं श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु धर्म ध्वजा फहराए, जिन धर्मनाथ कहलाए।
हम जिन का ध्यान लगाते, यह पावन अर्घ्य चढ़ाते।।15।।

ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिन शांतिनाथ सुखदाता, हैं जग जीवों के त्राता।
हम जिन का ध्यान लगाते, यह पावन अर्घ्य चढ़ाते।।16।।

ॐ ह्रीं श्री शांतिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हैं तीन पदों के धारी, श्री कुन्थू जिन शिवकारी।
हम जिन का ध्यान लगाते, यह पावन अर्घ्य चढ़ाते।।17।।

ॐ ह्रीं श्री कुन्थुनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु अरहनाथ को जानो, शिवपथ के दाता मानो।
हम जिन का ध्यान लगाते, यह पावन अर्घ्य चढ़ाते।।18।।

ॐ ह्रीं श्री अरहनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हैं कर्म मल्ल के नाशी, प्रभु मल्लिनाथ शिव वासी।
हम जिन का ध्यान लगाते, यह पावन अर्घ्य चढ़ाते ।।19 ।।

ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु मुनिसुव्रत व्रतधारी, इस जग में मंगलकारी।
हम जिन का ध्यान लगाते, यह पावन अर्घ्य चढ़ाते ।।20 ।।

ॐ ह्रीं श्री मुनिसुव्रतनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो नमीनाथ को ध्याते, वह शिवपुर धाम बनाते।
हम जिन का ध्यान लगाते, यह पावन अर्घ्य चढ़ाते ।।21 ।।

ॐ ह्रीं श्री नमीनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जीवों पर दया विचारे, नेमी जिन दीक्षा धारे।
हम जिन का ध्यान लगाते, यह पावन अर्घ्य चढ़ाते ।।22 ।।

ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उपसर्ग सहे जो भारी, प्रभु पार्श्व बने शिवकारी।
हम जिन का ध्यान लगाते, यह पावन अर्घ्य चढ़ाते ।।23 ।।

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिन वीर वीरता पाए, शिवपुर में धाम बनाए।
हम जिन का ध्यान लगाते, यह पावन अर्घ्य चढ़ाते ।।24 ।।

ॐ ह्रीं श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीर्थंकर चौबिस गाये, जो शिव पदवी को पाए।
हम जिन का ध्यान लगाते, यह पावन अर्घ्य चढ़ाते ।।25 ।।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा

पूज्य कहे चौबीस जिन, तीनों लोक त्रिकाल।
उनकी पूजा कर यहाँ, गाते हैं जयमाल।।

(छन्द : तोटक)

जय आदिनाथ भगवान नमस्ते, गुण अनन्त की खान नमस्ते।
अजितनाथ पद माथ नमस्ते, जोड़ जोड़ द्वय हाथ नमस्ते।।
सम्भव भव हर देव नमस्ते, अभिनन्दन जिनदेव नमस्ते।
सुमतिनाथ के पाद नमस्ते, पदम प्रभु पद माथ नमस्ते।।
श्री सुपार्श्व जिनराज नमस्ते, चन्द्र प्रभु पद आज नमस्ते।
पुष्पदन्त गुणवन्त नमस्ते, शीतल जिन शिवकंत नमस्ते।।
जय श्रेयनाथ भगवंत नमस्ते, वासुपूज्य धीवन्त नमस्ते।
विमलनाथ जिनदेव नमस्ते, प्रभु अनन्त जिन देव नमस्ते।।
धर्मनाथ चिद्रूप नमस्ते, शान्तीनाथ अनूप नमस्ते।
जय-जय कुन्थुनाथ नमस्ते, अरहनाथ पद साथ नमस्ते।।
जय मल्लिनाथ भगवान नमस्ते, मुनिसुव्रत व्रतवान नमस्ते।
जय नमिनाथ पद माथ नमस्ते, नेमिनाथ जिन साथ नमस्ते।।
जय पार्श्वनाथ धर धीर नमस्ते, तीर्थंकर महावीर नमस्ते।
विद्यार्थी विज्ञान नमस्ते, निर्गुण हो गुणवान नमस्ते।।
उपकारी जगनाथ नमस्ते, भक्ति भाव के साथ नमस्ते।
श्रद्धा के आधार नमस्ते, व्रतदायक अनगार नमस्ते।।
मुक्ती पथ दातार नमस्ते, भव से करते पार नमस्ते।
हमको देना साथ नमस्ते, 'विशद' झुकाते माथ नमस्ते।।

दोहा– चौबीसों जिनराज पद, झुका रहे हम शीश।
यही भावना है 'विशद', मिले सदा आशीष।।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सोरठा– भक्ति भाव के साथ, चौबीसों जिनराज की।
बने श्री का नाथ, जो नित प्रति पूजा करें।।

पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

गणधर पूजा

स्थापना

भरत क्षेत्र में हो गये, चौबीस जिन तीर्थेश।
चौदह सौ बावन हुए, जिनके श्रेष्ठ गणेश।।
दिव्य देशना झेलते, जग में मंगलकार।
आह्वानन करते हृदय, नत हो बारम्बार।।

ॐ ह्रीं इवीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय अत्र अवतर–अवतर संवौषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

(तर्ज – पूजो हो भाई)

जिन पूजो हो भाई, सभी मिल पूजो हो भाई।
तीर्थंकर जिन गणधर के पद, पूजो हो भाई।। टेक।।
जन्म–मरण से सुखी–दुखी हो, कर्म बन्ध पाया।
जन्मादिक का रोग आपने, अपना विनशाया।
शिवपद के राही बनने हम, चरण शरण आए।
पद पंकज में विनती अपनी, हे प्रभु हम लाए।।1।।

ॐ ह्रीं इवीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झ्रौं झ्रौं नमः जन्म–जरा–मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

पर भावों में झुलस रहे हम, निज को बिसराए।
अशरण शरण आप के पद में, चन्दन यह लाए।।
शिवपद के राही बनने हम, चरण शरण आए।
पद पंकज में विनती अपनी, हे प्रभु हम लाए।।2।। जिन..

ॐ ह्रीं इवीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झ्रौं झ्रौं नमः संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

नश्वर पर्यायों में फँसकर, अक्षय पद भूले।
तन मन धन के मद में फँसकर, रहे सदा फूले।।
शिवपद के राही बनने हम, चरण शरण आए।
पद पंकज में विनती अपनी, हे प्रभु हम लाए।।3।। जिन..

ॐ ह्रीं इवीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झ्रौं झ्रौं नमः अक्षयपद प्राप्ताय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्प सुगंधित मुरझा जाते, गंध बदल जाती।
इन्द्रिय की आशा में निज की, नहीं याद आती।।
शिवपद के राही बनने हम, चरण शरण आए।
पद पंकज में विनती अपनी, हे प्रभु हम लाए।।4।। जिन..

ॐ ह्रीं इवीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झ्रौं झ्रौं नमः कामबाण विध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

इच्छाएँ भव–भव भटकातीं, इनसे बच जाएँ।
क्षुधा रोग के नाश हेतु यह, नेवैद्य सरस लाएँ।।
शिवपद के राही बनने हम, चरण शरण आए।
पद पंकज में विनती अपनी, हे प्रभु हम लाए।।5।। जिन..

ॐ ह्रीं इवीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झ्रौं झ्रौं नमः क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जड़ दीपक से हुई दिवाली, निज में तम छाया।
ज्ञान दीप अब जले हृदय में, भाव मेरे आया।।
शिवपद के राही बनने हम, चरण शरण आए।
पद पंकज में विनती अपनी, हे प्रभु हम लाए।।6।। जिन..

ॐ ह्रीं इवीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झ्रौं झ्रौं नमः मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मों की शक्ती के आगे, अतिशय दुख पाए।
ध्यान अग्नि से कर्म जलाने, नाथ शरण आए।।

शिवपद के राही बनने, हम चरण शरण आए।
पद पकंज में विनती अपनी, हे प्रभु हम लाए।।7।। जिन..

ॐ ह्रीं इवीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झ्रौं झ्रौं नमः अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

पाप-पुण्य का फल पाकर हम, चहुँगति भटकाए।
शिवतरु का फल पाने हे प्रभु, हम यह फल लाए।।
शिवपद के राही बनने हम, चरण शरण आए।
पद पकंज में विनती अपनी, हे प्रभु हम लाए।।8।। जिन..

ॐ ह्रीं इवीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झ्रौं झ्रौं नमः मोक्षफलप्राप्ताय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

नहीं कामना जड़ वैभव की, शिव पद की आशा।
जल फलादि वसु अर्घ चढ़ाते, हो शिवपुर वासा।।
शिवपद के राही बनने हम, चरण शरण आए।
पद पकंज में विनती अपनी, हे प्रभु हम लाए।।9।। जिन..

ॐ ह्रीं इवीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झ्रौं झ्रौं नमः अनर्घपदप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- सत्य अहिंसा धर्म के, आप कहाए ईश।
शांतीधारा दे यहाँ, झुका रहे हम शीश।। *(शांतये शांतिधारा)*

रत्नत्रय के कोष तुम, शिव सुख के करतार।
पुष्पाञ्जलि करते चरण, नत हो बारम्बार।। *(पुष्पांजलिं क्षिपेत्)*

अर्घ्यावली

दोहा- भवि जीवों को आप ही, दिखा रहे शिव पंथ।
नेता हो शिव मार्ग के, वीतराग भगवन्त।।

मण्डलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

चौबीस गणधरों के अर्घ्य

गणधर रहे चौरासी भाई, वृषभसेन आदिक सुखदायी।
आदिनाथ के साथ में जानो, सहस चौरासी अनुपम मानो।।1।।

ॐ ह्रीं श्री वृषभेश्वरस्य वृषभसेनादि चतुरशीति गणधर चतुर्विंशति सहस्र सर्व मुनीश्वरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सिंहसेन आदिक शुभकारी, नब्बे गणधर मंगलकारी।
अजितनाथ स्वामी के गाए, एक लाख मुनिवर भी पाए।।2।।

ॐ ह्रीं श्री अजितनाथ जिनस्य सिंहसेनादि नवतिगणधर लक्षैक सर्व मुनीश्वरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गणधर एक सौ पाँच बताए, चारुषेण आदिक कहलाए।
सम्भव जिन के मंगलकारी, लक्ष दोय मुनिवर अविकारी।।3।।

ॐ ह्रीं श्री संभवनाथ जिनस्य चारुषेणादि पंचाधिकशतगणधर लक्षद्वय सर्व मुनीश्वरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गणधर एक सौ तीन कहाए, वज्रनाभि आदी शुभ गाए।
अभिनंदन स्वामी के गाए, एक लाख मुनिवर भी पाए।।4।।

ॐ ह्रीं श्री अभिनंदननाथ जिनस्य वज्रनाभिदि त्रयाधिकशत गणधर लक्षैक सर्व मुनीश्वरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

एक सौ सोलह गणधर गाए, अमर आदि मुनि पदवी पाए।
सुमतिनाथ के मंगलकारी, जिनके पद में ढोक हमारी।।5।।

ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथ जिनस्य अमरादि षोडशाधिकशत गणधर लक्षत्रयविंशति सहस्र सर्व मुनीश्वरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

एक सौ दश गणधर शुभ गाये, वज्र चामरादिक कहलाए।
पद्मप्रभु के मंगलकारी, जिनके पद में ढ़ोक हमारी।।6।।

ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभ जिनस्य वज्रचामरादि दशादिक शतगणधर लक्षत्रयाधिक त्रिंशत सहस्र सर्व मुनीश्वरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गणधर पन्चानवे शुभ जानो, बल आदी अतिशय पहिचानो।
श्री सुपार्श्व जिन के शुभकारी, तीन लाख मुनिवर अविकारी।।7।।

ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्वनाथ जिनस्य पंचनवति गणधर लक्षत्रय सहस्र सर्व मुनीश्वरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीन अधिक नब्बे शुभकारी, दत्तादिक गणधर अनगारी।
चन्द्रप्रभु के मंगलकारी, ढाई लाख मुनिवर अविकारी।।8।।

ॐ ह्रीं श्री चन्द्रप्रभ जिनस्य दत्तादित्रिनवति गणधर सार्धद्वय लक्ष सर्व मुनीश्वरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गणधर कहे अठासी भाई, विदर्भ आदि अनुपम सुखदायी।
पुष्पदन्त के मंगलकारी, लाख दोय मुनिवर अविकारी।।9।।

ॐ ह्रीं श्री पुष्पदंतनाथ जिनस्य विदर्भादि अष्टाशीति गणधर लक्षद्वय सर्व मुनीश्वरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इक्यासी गणधर शुभकारी, अनगारादी मंगलकारी।
शीतल जिनके शुभ मनहारी, एक लाख मुनिवर अविकारी।।10।।

ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथ जिनस्य अनगारादि एकाशीति गणधर एकलक्ष सर्व मुनीश्वरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कुन्थु आदि गणधर शुभ जानो, श्रेष्ठ सतत्तर अनुपम मानो।
श्री श्रेयांस के मंगलकारी, सहस चौरासी मुनि अविकारी।।11।।

ॐ ह्रीं श्री श्रेयांसनाथ जिनस्य कुंथु आदि सप्तसप्तति गणधर चतुरशीति सहस्र सर्व मुनीश्वरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

धर्मादी छियासठ शुभकारी, वासुपूज्य के शुभ मनहारी।
सहस बहत्तर थे अनगारी, गणधर थे मुनिवर अविकारी।।12।।

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्यनाथ जिनस्य धर्मादि षट्षष्ठि गणधर द्विसप्तति सर्व मुनीश्वरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा– मन्दरादि पचपन कहे, विमलनाथ के साथ।
गणधर अड़सठ सहस मुनि, झुका रहे हम माथ।।13।।

ॐ ह्रीं श्री विमलनाथ जिनस्य मंदरादि पंचपंचाशत् गणधर अष्टषष्ठि सहस्र सर्व मुनीश्वरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अनन्तनाथ के जयादिक, गणधर कहे पचास।
अन्य मुनी छयासठ सहस, पूरी करते आश।।14।।

ॐ ह्रीं श्री अनन्तनाथ जिनस्य जयादिपंचाशत् गणधर षट्षष्ठि सहस्र सर्व मुनीश्वरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अरिष्टादी चालीस त्रय, धर्मनाथ के साथ।
गणधर मुनि चौंसठ सहस, तिन्हें झुकाएँ माथ।।15।।

ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथ जिनस्य अरिष्टसेनादि त्रिचत्वारिंशत गणधर चतुःषष्ठि सहस्र सर्व मुनीश्वरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चक्रायुध आदी महा, गणधर थे छत्तीस।
शांतिनाथ के साथ में, बासठ सहस्र मुनीश।।16।।

ॐ ह्रीं श्री शांतिनाथ जिनस्य चक्रायुधादि षट्त्रिंशत् गणधर द्विषष्ठि सहस्र सर्व मुनीश्वरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गणधर कुन्थूनाथ के, स्वयंभ्वादि पैंतीस।
साठ सहस्र मुनिराज पद, झुका रहे हम शीश।।17।।

ॐ ह्रीं श्री कुन्थुनाथ जिनस्य स्वयंभू आदि पंचत्रिंशत गणधर ष सर्व मुनीश्वरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कुम्भादी अरनाथ के, गणधर जानो तीस।
सहस पचास मुनिराज पद, झुका रहे हम शीश।।18।।

ॐ ह्रीं श्री अरनाथ जिनस्य कुंभादि त्रिंशत् गणधर पंचाशत् सहस्र सर्व मुनीश्वरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गणधर मल्लीनाथ के, विशाखादि अठबीस।
अन्य मुनीश्वर जानिए, श्रेष्ठ सहस चालीस।।19।।

ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथ जिनस्य विशाखादि अष्टाविंशति गणधर चत्त्वारिंशत सहस्र सर्व मुनीश्वरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मुनिसुव्रत के आठ दश, मल्ली आदि गणेश।
तीस सहस मुनिराज थे, पाए मार्ग विशेष।।20।।

ॐ ह्रीं श्री मुनिसुव्रतनाथ जिनस्य मल्लि आदि अष्टादश गणधर त्रिंशत् सहस्र सर्व मुनीश्वरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुप्रभादि नमिनाथ के, गणधर सत्रह खास।
तीस सहस मुनि अन्य थे, पूरी करते आस।।21।।

ॐ ह्रीं श्री नमिनाथ जिनस्य सुप्रभादि सप्तदश गणधर विंशति सहस्र सर्व मुनीश्वरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ग्यारह नेमीनाथ के, वरदत्तादि गणेश।
सहस अठारह अन्य मुनि, धरे दिगम्बर भेष।।22।।

ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथ जिनस्य वरदत्तादि एकादश गणधर अष्टादश सहस्र सर्व मुनीश्वरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गणधर पारसनाथ के, स्वयंभ्वादि दश जान।
अन्य मुनि सोलह सहस, हुए गुणों की खान।।23।।

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ स्वयंभू आदिदश गणधर षोडस सहस्र सर्व मुनीश्वरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ग्यारह गणधर वीर के, गौतमादि विख्यात।
चौदह सहस मुनीश पद, झुका रहे हम नाथ।।24।।

ॐ ह्रीं श्री वीर जिनस्य इन्द्रभूति गौतमादि एकादश गणधर चतुर्दश सहस्र सर्व मुनीश्वरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौबीसों तीर्थेश के, गणधर सर्व महान।
चौदह सौ बावन कहे, करते हम गुणगान।।
अष्टा विंशति लाख अरु, अड़तालीस हजार।
सप्त संघ के मुनीपद, वन्दन बारम्बार।।25।।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति जिनस्य द्विपंचाशदधिक चतुर्दश शत गणधर एवं सर्व मुनीश्वरेभ्यो पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा– गणधर पाते ऋद्धियाँ, जग में पूज्य त्रिकाल।
उनकी अब गाते यहाँ, भाव सहित जयमाल।।

चौपाई

काल अनादी से हे भाई, कर्म भूमियाँ हैं सुखदायी।
कर्म भूमियों में शुभकारी, तीर्थंकर हों मंगलकारी।।
तीर्थंकर के गणधर जानो, चार ज्ञानधारी हों मानो।
वह भी श्रेष्ठ ऋद्धियाँ पाते, अविकारी निर्ग्रन्थ कहाते।।

प्रभु की दिव्य देशना भाई, झेला करते हैं सुखदायी।
गण के जो गणनायक जानो, गणधर देव कहाते मानो।।
स्याद्वादमय वाणी प्यारी, अनेकांत मय है शुभकारी।
अंग पूर्व के होते ज्ञाता, जो अष्टांग निमित्त के ज्ञाता।।
प्रज्ञा श्रमण कहे जो जाते, अनुपम प्रज्ञा मुनिवर पाते।
मुनिवर बुद्धि ऋद्धि शुभ पाए, जिसके भेद अठारह गाये।।
औषधि ऋद्धी दूजी जानो, आठ भेद जिसके पहिचानो।
तृतीय बल ऋद्धी शुभ गाई, तीन भेद से युक्त बताई।।
तप ऋद्धी चौथी पहिचानो, सप्त भेद जिसके पहिचानो।
रस ऋद्धी पञ्चम कहलाई, छह भेदों से सहित बताई।।
श्रेष्ठ विक्रिया छठवी जानो, भेद एकादश जिसके मानो।
सप्तम चारण ऋद्धी गाई, नौ भेदों युत जो कहलाई।।
अष्टम अक्षीण ऋद्धी जानो, दो भेदों युत जो पहिचानो।
चौंसठ उत्तर भेद गिनाए, सर्व केवली गणधर पाए।।
महिमा गणधर की शुभकारी, सर्व जहाँ से होती न्यारी।
होते मोक्ष मार्ग के नेता, अनुपम होते कर्म विजेता।।
जो हैं जन-जन के हितकारी, सर्व जहाँ में मंगलकारी।
जिनपद के होते अनुगामी, परम पूज्य हैं गणधर स्वामी।।
'विशद' भावना हम यह भाते, गणधर पद में शीश झुकाते।
मोक्ष मार्ग हम शुभ अपनाएँ, कर्म नाशकर शिवपुर जाएँ।।

दोहा– तीर्थंकर चौबीस के, गणधर रहे महान।
विशद भाव से हम यहाँ, करते हैं गुणगान।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति गणधरेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा– गणधर स्वामी के चरण, झुका रहे हम माथ।
हमको भी अब ले चलो, मोक्ष महल में साथ।।

।। पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ।।

जाप्य–ॐ ह्रीं अष्टादश दोष विरहित षट् चत्त्वारिंशद गुणसंयुक्त अर्हत् परमेष्ठीभ्यो नमः।

समुच्चय जयमाला

दोहा– अर्हत् की महिमा अगम, कोई ना पावे पार।
जयमाला गाते विशद, नत हो बारम्बार।।

(शम्भू छंद)

जय–जय–जय अरहंत जिनेश्वर, जय–जय तीर्थंकर स्वामी।
समवशरण में शोभा पाते, पूजें हम त्रिभुवन नामी।।
सोलहकारण भव्य भावना, तीर्थंकर पद के कारण।
छियालिस मूलगुणों के धारी, करते दोषों का वारण।।
तीर्थंकर जो हुए लोक में, अधर गगन में रहते हैं।
पाँच हजार धनुष ऊँचाई, प्रथम सु जिन की कहते हैं।।
अधरशिला शुभ इन्द्र नीलमणि, की अनुपम शोभा पावे।
चार कोट अरु पंच वेदियाँ, अष्ट भूमियाँ मन भावें।।
धूलिशाल है कोट बाह्य में, रत्न चूर्ण से बना महान्।
चउदिश तोरण द्वार सजे हैं, स्वर्ण मयी स्तम्भ प्रधान।।
मंगल द्रव्य रखे नव निधियाँ, जलें धूप घट दोनों ओर।
मध्य द्वार बाजू में इक–इक, नाट्य शाला शुभ करे विभोर।।
बत्तिस रंग भूमियों में शुभ, सुर कन्याएँ नृत्य करें।
भव्य जीव देखें प्रमुदित हो, मन मयूर को विशद हरें।।
द्वितिय कोट स्वर्णमय तीजा, रजतमयी गाया शुभकार।
चौथा है स्फटिक मणी का, पंच वेदियाँ मंगलकार।।
गोपुर द्वार चार द्वारों पर, देव भवनवासी के खास।
ज्योतिष व्यन्तर वैमानिक के, रहें हमेशा प्रभु के पास।।
बाल वृद्ध सुर नर पशु आते, बीस सहस चढ़ते सोपान।
पाद लेप औषधि बिन भाई, चमत्कार यह रहा महान।।
धूलिसाल के अन्दर वीथियों, के हैं मध्य मानस्तम्भ।
द्वादश योजन से दिखते जो, खण्डित करें मान छल दंभ।।

प्रथम चैत्यभूमि के जिनगृह, पूज रहे हम मंगलकार।
द्वितिय भूमि खातिका भाई, जिसकी महिमा अपरम्पार।।
तृतिय लता भूमी कहलाई, समवशरण की महिमावान।
चौथी उपवन भूमी में चउ, वृक्षों पर चउदिश भगवान।।
पंचम ध्वज भूमि छठवीं में, कल्पद्रुम दश विध पहिचान।
जिसकी चारों शाखाओं में, जिन चैत्यालय अतिशयवान।।
सप्तम भवन भूमि मनहारी, स्तूपों में बिम्ब महान।
श्री मण्डप भूमि है अष्टम्, जो है द्वादश कोठेवान।।
मध्य में गंध कुटी के ऊपर, दिव्य देशना दें भगवान।
प्रथम पीठ पर धर्म चक्र ले, यक्ष खड़े हैं चारों ओर।।
द्वितिय पीठ पर अष्ट द्रव्य ध्वज, करते मन को भाव विभोर।
रत्नमयी शुभ पीठ तीसरी, जिस पर सोहे कमलासन।।
सिंहासन पर अधर प्रभु जी, चउ अंगलु ऊपर भगवन।
दिव्य ध्वनि की महिमा अनुपम, वर्णन करना कठिन महान।
गणधरादि भी पूर्ण रूप से, कर ना पाते पूर्ण बखान।।
भूत भविष्यत वर्तमान में, तीर्थंकर जिन हुए त्रिकाल।
छियालिस मूल गुणों के धारी, होते हैं जो तीनों काल।।
पंच कल्याणक पाने वाले, करो प्रभु मेरा कल्याण।
अर्हत् महिमा यह विधान कर, करो सभी प्रभु का गुणगान।।
गुण अनन्त हैं प्रभू आपके, सहस आठ बतलाए नाम।
विशद भाव से चरण कमल में, करते हैं यह भक्त प्रणाम।।

दोहा– महिमा जिन अर्हन्त की, जग में रही महान।
अल्पबुद्धि हम क्या करें, हे प्रभु तव गुणगान।।

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री अर्हत् जिनेन्द्राय जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा– चरण कमल के दास यह, आए आपके द्वार।
भव सिन्धू से अब प्रभु, शीघ्र लगाओ पार।।

इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

प्रशस्ति

स्वस्ति श्री वीर निर्वाण सम्वत् 2539 विक्रम सम्वत् 2070 मासोत्तमेमासे शुभे मासे अषाढ़ मासे शुक्ल पक्षे शुभ तिथि एकम् मंगलवासरे श्री कुन्दकुन्दाम्नाये बलात्कारगणे सेनगच्छे नन्दी संघस्य परम्परायां श्री आदिसागराचार्या जातास्तत् शिष्यः श्री महावीरकीर्ति आचार्या जातास्तत् शिष्य विमलसागराचार्या जातास्तत् शिष्यः भरतसागराचार्या विरागसागराचार्या ततशिष्यः विशदसागराचार्य कर–कमले श्री अर्हत् महिमा विधान लिख्यते इति शुभं भूयात्।

आरती *(तर्ज– आज करें श्री विशदसागर की...)*

आज करें जिन तीर्थंकर की, आरती अतिशयकारी।
घृत के दीप जलाकर लाए, जिनवर के दरबार।।
हो भगवन् हम सब उतारें मंगल आरती.....
सोलह कारण भव्य भावना, पूर्व भवों में भाई।
शुभ तीर्थंकर प्रकृति पद में, तीर्थंकर के पाई।।
हो भगवन् हम सब उतारें मंगल आरती.. ।।1।।
मिथ्या कर्म नाशकर क्षायक, सम्यक्दर्शन पाया।
प्रबल पुण्य का योग प्रभु के, शुभ जीवन में आया।।
हो भगवन् हम सब उतारें मंगल आरती.. ।।2।।
गर्भ जन्मकल्याणक आदि, आकर देव मनाते।
केवलज्ञान प्रकट होने पर, समवशरण बनवाते।।
हो भगवन् हम सब उतारें मंगल आरती.. ।।3।।
समवशरण के मध्य प्रभु की, शोभा है मनहारी।
उभय लक्ष्मी से सज्जित है, महिमा अतिशयकारी।।
हो भगवन् हम सब उतारें मंगल आरती.. ।।4।।
सर्व कर्म को नाश प्रभु जी, मोक्ष महल में जाते।
विशद सौख्य में लीन हुए फिर, लौट कभी न आते।।
हो भगवन् हम सब उतारें मंगल आरती.. ।।5।।
तीर्थंकर पद सर्वश्रेष्ठ है, उसको तुमने पाया।
उस पदवी को पाने हेतु, मेरा मन ललचाया।।
हो भगवन् हम सब उतारें मंगल आरती.. ।।6।।
नाथ आपकी आरती करके, उसके फल को पाएँ।
जगत् वास को छोड़ प्रभु जी, मोक्ष महल को पाएँ।।
हो भगवन् हम सब उतारें मंगल आरती.. ।।7।।

प.पू. 108 आचार्य श्री विशदसागरजी महाराज की पूजन

(स्थापना)

पुण्य उदय से हे ! गुरुवर, दर्शन तेरे मिल पाते हैं।
श्री गुरुवर के दर्शन करके, हृदय कमल खिल जाते हैंङ्क
गुरु आराध्य हम आराधक, करते उर से अभिवादन।
मम् हृदय कमल में आ तिष्ठो, गुरु करते हैं हम आह्वाननङ्क
ॐ ह्रूँ प.पू. क्षमामूर्ति आचार्य श्री 18 विशदसागर मुनीन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् इति आह्वानन्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम् सन्निहितो भव–भव वषट् सन्निधिकरणम्।
सांसारिक भोगों में फँसकर, ये जीवन वृथा गंवाया है।
रागद्वेष की वैतरणी से, अब तक पार न पाया हैङ्क
विशद सिंधु के श्री चरणों में, निर्मल जल हम लाए हैं।
भव तापों का नाश करो, भव बंध काटने आये हैंङ्क
ॐ ह्रूँ प.पू. क्षमामूर्ति आचार्य श्री 18 विशदसागर मुनीन्द्राय जन्म–जरा–मृत्यु विनाशनाय जलं निर्व.स्वाहा।
क्रोध रूप अग्नि से अब तक, कष्ट बहुत ही पाये हैं।
कष्टों से छुटकारा पाने, गुरु चरणों में आये हैंङ्क
विशद सिंधु के श्री चरणों में, चंदन घिसकर लाये हैं।
संसार ताप का नाश करो, भव बंध नशाने आये हैंङ्क
ॐ ह्रूँ प.पू. क्षमामूर्ति आचार्य श्री 18 विशदसागर मुनीन्द्राय संसार ताप विध्वंशनाय चंदनं निर्व.स्वाहा।
चारों गतियों में अनादि से, बार–बार भटकाये हैं।
अक्षय निधि को भूल रहे थे, उसको पाने आये हैंङ्क
विशद सिंधु के श्री चरणों में, अक्षय अक्षत लाये हैं।
अक्षय पद हो प्राप्त हमें, हम गुरु चरणों में आये हैंङ्क
ॐ ह्रूँ प.पू. क्षमामूर्ति आचार्य श्री 18 विशदसागर मुनीन्द्राय अक्षय पद प्राप्ताय अक्षतान् निर्व.स्वाहा।
काम बाण की महावेदना, सबको बहुत सताती है।
तृष्णा जितनी शांत करें वह, उतनी बढ़ती जाती हैङ्क
विशद सिंधु के श्री चरणों में, पुष्प सुगंधित लाये हैं।
काम बाण विध्वंश होय गुरु, पुष्प चढ़ाने आये हैंङ्क
ॐ ह्रूँ प.पू. क्षमामूर्ति आचार्य श्री 18 विशदसागर मुनीन्द्राय कामबाण विध्वंशनाय पुष्पं निर्व. स्वाहा।
काल अनादि से हे गुरुवर ! क्षुधा से बहुत सताये हैं।
खाये बहु मिष्ठान जरा भी, तृप्त नहीं हो पाये हैंङ्क
विशद सिंधु के श्री चरणों में, नैवेद्य सुसुन्दर लाये हैं।
क्षुधा शांत कर दो गुरु भव की ! क्षुधा मेटने आये हैंङ्क
ॐ ह्रूँ प.पू. क्षमामूर्ति आचार्य श्री 18 विशदसागर मुनीन्द्राय क्षुधा रोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्व.स्वाहा।
मोह तिमिर में फंसकर हमने, निज स्वरूप न पहिचाना।
विषय कषायों में रत रहकर, अंत रहा बस पछतानाङ्क

विशद सिंधु के श्री चरणों में, दीप जलाकर लाये हैं।
मोह अंध का नाश करो, मम् दीप जलाने आये हैंङ्क
ॐ ह्रूँ प.पू. क्षमामूर्ति आचार्य श्री 108 विशदसागर मुनीन्द्राय मोहान्धकार विध्वंशनाय दीपं निर्व.स्वाहा।
अशुभ कर्म ने घेरा हमको, अब तक ऐसा माना था।
पाप कर्म तज पुण्य कर्म को, चाह रहा अपनाना थाङ्क
विशद सिंधु के श्री चरणों में, धूप जलाने आये हैं।
आठों कर्म नशाने हेतु, गुरु चरणों में आये हैंङ्क
ॐ ह्रूँ प.पू. क्षमामूर्ति आचार्य श्री 108 विशदसागर मुनीन्द्राय अष्टकर्म दहनाय धूपं निर्व.स्वाहा।
पिस्ता अरु बादाम सुपाड़ी, इत्यादि फल लाये हैं।
पूजन का फल प्राप्त हमें हो, तुमसा बनने आये हैंङ्क
विशद सिंधु के श्री चरणों में, भाँति-भाँति फल लाये हैं।
मुक्ति वधु की इच्छा करके, गुरु चरणों में आये हैंङ्क
ॐ ह्रूँ प.पू. क्षमामूर्ति आचार्य श्री 108 विशदसागर मुनीन्द्राय मोक्षफल प्राप्ताय फलम् निर्व.स्वाहा।
प्रासुक अष्ट द्रव्य हे गुरुवर ! थाल सजाकर लाये हैं।
महाव्रतों को धारण कर लें, मन में भाव बनाये हैंङ्क
विशद सिंधु के श्री चरणों में, अर्घ समर्पित करते हैं।
पद अनर्घ हो प्राप्त हमें गुरु, चरणों में सिर धरते हैंङ्क
ॐ ह्रूँ प.पू. क्षमामूर्ति आचार्य श्री 108 विशदसागर मुनीन्द्राय अनर्घपदप्राप्ताय अर्घ्यं निर्व.स्वाहा।

जयमाला

दोहा- विशद सिंधु गुरुवर मेरे, वंदन करूँ त्रिकाल।
मन-वच-तन से गुरु की, करते हैं जयमालङ्क

गुरुवर के गुण गाने को, अर्पित है जीवन के क्षण-क्षण।
श्रद्धा सुमन समर्पित हैं, हर्षायें धरती के कण-कणङ्क
छतरपुर के कुपी नगर में, गूँज उठी शहनाई थी।
श्री नाथूराम के घर में अनुपम, बजने लगी बधाई थीङ्क
बचपन में चंचल बालक के, शुभादर्श यूँ उमड़ पड़े।
ब्रह्मचर्य व्रत पाने हेतु, अपने घर से निकल पड़ेङ्क
आठ फरवरी सन् छियानवे को, गुरुवर से संयम पाया।
मोक्ष ज्ञान अन्तर में जागा, मन मयूर अति हर्षायाङ्क
पद आचार्य प्रतिष्ठा का शुभ, दो हजार सन् पाँच रहा।
तेरह फरवरी बसंत पंचमी, बने गुरु आचार्य अहा।।
तुम हो कुंद-कुंद के कुन्दन, सारा जग कुन्दन करते।
निकल पड़े बस इसलिए, भवि जीवों की जड़ता हरतेङ्क
मंद मधुर मुस्कान तुम्हारे, चेहरे पर बिखरी रहती।
तव वाणी अनुपम न्यारी है, करुणा की शुभ धारा बहती हैङ्क

तुममें कोई मोहक मंत्र भरा, या कोई जादू टोना है।
है वेश दिगम्बर मनमोहक अरु, अतिशय रूप सलौना हैङ्क
हैं शब्द नहीं गुण गाने को, गाना भी मेरा अन्जाना।
हम पूजन स्तुति क्या जाने, बस गुरु भक्ति में रम जानाङ्क
गुरु तुम्हें छोड़ न जाएँ कहीं, मन में ये फिर-फिरकर आता।
हम रहें चरण की शरण यहीं, मिल जाये इस जग की साताङ्क
सुख साता को पाकर समता से, सारी ममता का त्याग करें।
श्री देव-शास्त्र-गुरु के चरणों में, मन-वच-तन अनुराग करेंङ्क
गुरु गुण गाएँ गुण को पाने, औ सर्वदोष का नाश करें।
हम विशद ज्ञान को प्राप्त करें, औ सिद्ध शिला पर वास करेंङ्क
ॐ ह्रूँ प.पू. क्षमामूर्ति आचार्य श्री 108 विशदसागर मुनीन्द्राय अनर्घपदप्राप्ताय पूर्णार्घ्यं निर्व.स्वाहा।
गुरु की महिमा अगम है, कौन करे गुणगान।
मंद बुद्धि के बाल हम, कैसे करें बखानङ्क
इत्याशीर्वादः (पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

आचार्य श्री 108 विशदसागरजी महाराज की आरती

(तर्ज:- माई री माई मुंडेर पर तेरे बोल रहा कागा.....)

जय-जय गुरुवर भक्त पुकारे, आरति मंगल गावे।
करके आरती विशद गुरु की, जन्म सफल हो जावे ।। गुरुवर के चरणों में नमन्...4 मुनिवर के...
ग्राम कुपी में जन्म लिया है, धन्य है इन्दर माता।
नाथूराम जी पिता आपके, छोड़ा जग से नाता।।
सत्य अहिंसा महाव्रती की.....2, महिमा कहीं न जाये।
करके आरती विशद गुरु की, जन्म सफल हो जावे।। गुरुवर के चरणों में नमन्...4 मुनिवर के...
सूरज सा है तेज आपका, नाम रमेश बताया।
बीता बचपन आयी जवानी, जग से मन अकुलाया।।
जग की माया को लखकर के.....2, मन वैराग्य समावे।
करके आरती विशद गुरु की, जन्म सफल हो जावे।। गुरुवर के चरणों में नमन्...4 मुनिवर के...
जैन मुनि की दीक्षा लेकर, करते निज उद्धारा।
विशद सिंधु है नाम आपका, विशद मोक्ष का द्वारा।।
गुरु की भक्ति करने वाला.....2, उभय लोक सुख पावे।
करके आरती विशद गुरु की, जन्म सफल हो जावे।। गुरुवर के चरणों में नमन्...4 मुनिवर के...
धन्य है जीवन, धन्य है तन-मन, गुरुवर यहाँ पधारे।
सगे स्वजन सब छोड़ दिये हैं, आतम रहे निहारे।।
आशीर्वाद हमें दो स्वामी.....2, अनुगामी बन जायें।
करके आरती विशद गुरु की, जन्म सफल हो जावे।। गुरुवर के चरणों में नमन्...4 मुनिवर के...

रचयिता : श्रीमती इन्दुमती गुप्ता, श्योपुर